CC0:In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

VHP 74

मूलरामायण

ASHOK KUMAR JAIN

सं 362

शीलनिरूपणाध्याय

'सुशीला' भिधहिन्दीटीकासहित

श्री दि. जैन (...) ... 1728

श्री मन्नालाल अभिमन्यु, एम० ए०

मूल्य -७६ न० पै०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वर्ग संख्या.................. प्राप्ति-संख्या......................

ग्रन्थ-कार्ड

श्री गणेश वर्णी दि० जैन (शोध) संस्थान

ग्रन्थागार

नरिया, वाराणसी-५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

❀ श्रीः ❀

सं. ३६२

मूलरामायण

'सुशीला' मिश्रहिन्दीटीकासहित

1-158

टीकाकार—

श्री मन्नालाल अभिमन्यु, एम० ए०

कृष्णा प्रकाशन

बुलानाला, वाराणसी-१

मूल्य ।=)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मुद्रकः—
मास्टर प्रिण्टिङ्ग वर्क्स,
बुलानाला, वाराणसी–१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

❀ श्रीगणेशाय नमः ❀

मूलरामायणम्

'सुशीला'भिधहिन्दीटीकासहितम्

तपःस्वाध्यायनिरतं तपस्वी वाग्विदां वरम् ।
नारदं परिपप्रच्छ वाल्मीकिर्मुनिपुङ्गवम् ॥ १ ॥

अन्वय - तपस्वी, वाल्मीकिः, तपःस्वाध्यायनिरतं, वाग्विदां, वरं, मुनिपुङ्गवं, नारदं, परिप्रपच्छ ॥ १ ॥

सुशीला टीका—(तपस्वी) तपोधन (वाल्मीकिः) वाल्मीकिजी ने (तपःस्वाध्यायनिरतं) तपस्या और वेदाध्ययन में निरन्तर लगे हुए (वाग्विदां वरं) शब्दतत्त्वविशारदों में श्रेष्ठ (मुनिपुङ्गवं) मुनियों में अग्रगण्य (नारदं) नारद जी से (परिप्रपच्छ) पूछा—॥ १ ॥

को न्वस्मिन्साम्प्रतं लोके गुणवान् कश्च वीर्यवान् ।
धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्यवाक्यो दृढव्रतः ॥ २ ॥

अन्वय—नु, साम्प्रतं, अस्मिन्, लोके, कः, गुणवान्, कश्च, वीर्यवान्, धर्मज्ञश्च, कृतज्ञश्च, सत्यवाक्यः, दृढव्रतश्च, कः ? ॥ २ ॥

सुशीला टीका—(नु) यह तो बतलाइए देवर्षे ! कि (साम्प्रतं) इस समय (अस्मिन्) इस (लोके) संसार में (गुणवान्) गुणवान्, (वीर्यवान्) पराक्रमी, (धर्मज्ञः) वर्णाश्रम धर्म को जानने वाला, (कृतज्ञः) उपकार मानने वाला, (सत्यवाक्यः) सत्यवादी (च) और (दृढव्रतः) अपने नियम पर दृढ रहने वाला (कः) ऐसा कोई व्यक्ति ('अस्ति') है ? ॥ २ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चारित्रेण च को युक्तः सर्वभूतेषु को हितः ।
विद्वान् कः कः समर्थश्च कश्चैकप्रियदर्शनः ॥ ३ ॥

अन्वय—'अस्मिन्, लोके', चारित्रेण, च, युक्तः, कः ? सर्वभूतेषु, हितः, च, कः ? विद्वान्, कः ? समर्थश्च, कः ? एकप्रियदर्शनः, च, कः ? ॥ ३ ॥

सुशीला टीका—('अस्मिन् लोके') 'इस संसार में' (चारित्रेण) सदाचार से (युक्तः) युक्त, (सर्वभूतेषु) समस्त प्राणिमात्र का (हितः) कल्याण करने वाला, (विद्वान्) सम्पूर्णशास्त्रवेत्ता, (समर्थः) सामर्थ्यशाली (च) और (एकप्रियदर्शनः) एकमात्र लोकोत्तर सौन्दर्यशाली (कः) कौन है ? ॥ ३ ॥

आत्मवान्को जितक्रोधो द्युतिमान् कोऽनसूयकः ।
कस्य बिभ्यति देवाश्च जातरोषस्य संयुगे ॥ ४ ॥

अन्वय—'अस्मिन् लोके', आत्मवान्, कः ? जितक्रोधः, कः ? द्युतिमान्, कः ? अनसूयकः, कः ? संयुगे, जातरोषस्य, कस्य, देवाः, च, बिभ्यति ? ॥ ४ ॥

सुशीला टीका—('अस्मिन् लोके') 'इस विश्व में' (आत्मवान्) मन पर अधिकार रखने वाला, (जितक्रोधः) क्रोध को जीतने वाला, (द्युतिमान्) कान्तिमान्, (च) और (अनसूयकः) परायी निन्दा 'मिथ्या आलोचना' न करने वाला (कः) कौन है ? (च) एवं (संयुगे) युद्ध में (जातरोषस्य) क्रुद्ध होने पर (कस्य) किससे (देवाः) देवता लोग भी (बिभ्यति) डर के मारे काँपते रहते हैं ? ॥ ४ ॥

एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं परं कौतूहलं हि मे ।
महर्षे त्वं समर्थोऽसि ज्ञातुमेवंविधं नरम् ॥ ५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्वय—'हे' महर्षे ! अहम्, एतद्, श्रोतुम्, इच्छामि, हि, मे, परं, कौतूहलम्, 'अस्ति', त्वम्, एवंविधं, नरं, ज्ञातुं, समर्थः, असि ॥५॥

सुशीला टीका—('हे' महर्षे) हे महर्षे नारद जी! (अहं) मैं (एतत्) यह 'उपर्युक्त विशिष्ट गुणों से युक्त महामानव के बारे में' (श्रोतुं) सुनना (इच्छामि) चाहता हूँ, (हि) क्योंकि इसके जानने के लिए (मे) मुझे (परं) उत्कट 'बड़ी' (कौतूहलं) उत्सुकता ('अस्ति') है ('च') और (त्वं) आप (एवंविधं) ऐसे (नरं) पुरुष को (ज्ञातुं) जानने में (समर्थः) (असि) हैं ॥ ५ ॥

श्रुत्वा चैतत्त्रिलोकज्ञो वाल्मीकेर्नारदो वचः ।
श्रूयतामिति चामन्त्र्य प्रहृष्टो वाक्यमब्रवीत् ॥ ६ ॥

अन्वय—वाल्मीकेः, एतद्, वचः, श्रुत्वा, त्रिलोकज्ञः, नारदः, 'भो वाल्मीके', श्रूयताम्, इति, च, आमन्त्र्य, प्रहृष्टः, वाक्यम्, अब्रवीत् ॥६॥

सुशीला टीका—(वाल्मीकेः) महर्षि वाल्मीकि के (एतद्) इस (वचः) वचन को (श्रुत्वा) सुनकर (त्रिलोकज्ञः) तीनों लोकों के वृत्तान्त के जाननेवाले (नारदः) नारद जी ('भो वाल्मीके!') 'हे वाल्मीकि जी!' आप (श्रूयताम्) सुनिए (आमन्त्र्य) इस प्रकार कह कर (इति च) और फिर (प्रहृष्टः) प्रसन्नतापूर्वक (वाक्यम्) यह बात (अब्रवीत्) बोले—॥ ६ ॥

बहवो दुर्लभाश्चैव ये त्वया कीर्तिता गुणाः ।
मुने वक्ष्याम्यहं बुद्ध्वा तैर्युक्तः श्रूयतां नरः ॥ ७ ॥

अन्वय—मुने !, त्वया, ये, बहवः, दुर्लभाः, च, गुणाः, एव, कीर्तिताः, तैः, युक्तः, नरः, अहं, बुद्ध्वा, वक्ष्यामि, श्रूयताम् ॥ ७ ॥

सुशीला टीका—(मुने) हे मुनिराज ! (त्वया) आपने (ये) जिन (बहवः) अनेक (दुर्लभाः) दुर्लभ (च गुणाः) 'गुणवान्,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वीर्यवान्, धर्मज्ञ आदि' गुणों का (एव) ही (कीर्तिताः) वर्णन किया है (तैः) उन 'अलौकिक गुणों' से (युक्तः) युक्त (नरः) पुरुष को (अहं) मैं (बुद्ध्वा) भलीभाँति सोच-विचार कर (वक्ष्यामि) कहता हूँ, (श्रूयताम्) आप सुनिए ॥ ७ ॥

इक्ष्वाकुवंशप्रभवो रामो नाम जनैः श्रुतः ।
नियतात्मा महावीर्यो द्युतिमान् धृतिमान्वशी ॥ ८ ॥

अन्वय—इक्ष्वाकुवंशप्रभवः, 'यः', जनैः, रामः, नाम, श्रुतः, 'स एव', नियतात्मा, महावीर्यः, द्युतिमान्, धृतिमान्, वशी, 'अस्ति' ॥ ८ ॥

सुशीला टीका—(इक्ष्वाकुवंशप्रभवः) सूर्यवंशी महाराज इक्ष्वाकु के वंश में उत्पन्न हुए एक ऐसे मर्यादा पुरुषोत्तम हैं ('यः') जो (जनैः) जनता में (रामः) राम (नाम) नाम से (श्रुतः) प्रसिद्ध हैं ('स एव') 'वे ही' (नियतात्मा) मन को वश में रखने वाले, (महावीर्यः) विपुल शक्तिशाली, (द्युतिमान्) कान्तिमान्, (धृतिमान्) धैर्यशाली और (वशी) जितेन्द्रिय ('अस्ति') हैं ॥ ८ ॥

बुद्धिमान्नीतिमान्वाग्मी श्रीमाञ्छत्रुनिवर्हणः ।
विपुलांसो महाबाहुः कम्बुग्रीवो महाहनुः ॥ ९ ॥

अन्वय—'सः' बुद्धिमान्, नीतिमान्, वाग्मी, श्रीमान्, शत्रुनिवर्हणः, विपुलांसः, महाबाहुः, कम्बुग्रीवः, महाहनुः 'अस्ति' ॥ ९ ॥

सुशीला टीका—('सः') वे (बुद्धिमान्) बुद्धिमान्, (नीतिमान्) राजनीतिज्ञ, (वाग्मी) वक्ता, (श्रीमान्) शोभायमान् और (शत्रुनिवर्हणः) शत्रुओं के संहारकर्ता हैं, (विपुलांसः) उनके दोनों कन्धे मोटे और (महाबाहुः) दोनों भुजाएँ बड़ी-बड़ी हैं, (कम्बुग्रीवः) उनकी ग्रीवा शङ्ख के समान तीन रेखाओं से युक्त और (महाहनुः) उनकी ठोढ़ी बड़ी पुष्ट है ॥ ९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

महोरस्को महेष्वासो गूढजत्रुररिन्दमः ।
आजानुबाहुः सुशिराः सुललाटः सुविक्रमः ॥१०॥

अन्वय—महोरस्कः, महेष्वासः, गूढजत्रुः, अरिन्दमः, आजानुबाहुः, सुशिराः, सुललाटः, सुविक्रमः ॥ १० ॥

सुशीला टीका—(महोरस्कः) उनकी छाती चौड़ी है, (महेष्वासः) धनुष भी बहुत बड़ा है, (गूढजत्रुः) उनकी हँसली 'गले के नीचे की हड्डी' मांस के कारण दिखाई नहीं पड़ती, (अरिन्दमः) वे वैरियों का दमन करनेवाले हैं, (आजानुबाहुः) घुटने तक लम्बी भुजाएँ हैं, (सुशिराः) 'छत्र की आकृति के समान' सुन्दर मस्तक है. (सुललाटः) प्रशस्त ललाट है और (सुविक्रमः) 'गजराज तथा सिंह के समान' मनोहर चाल है ॥ १० ॥

समः समविभक्ताङ्गः स्निग्धवर्णः प्रतापवान् ।
पीनवक्षा विशालाक्षो लक्ष्मीवाञ्छुभलक्षणः ॥११॥

अन्वय—समः, समविभक्ताङ्गः, स्निग्धवर्णः, प्रतापवान् , पीनवक्षाः, विशालाक्षः, लक्ष्मीवान् , शुभलक्षणः ॥ ११ ॥

सुशीला टीका—(समः) वे न तो अधिक लम्बे हैं और न नाटे ही हैं 'उनका शरीर मध्यम श्रेणी का है', (समविभक्ताङ्गः) उनका शरीर सुडौल है, (स्निग्धवर्णः) उनके शरीर का रङ्ग चिकना 'साँवला' है, (प्रतापवान्) वे वड़े प्रतापशाली हैं, (पीनवक्षाः) उनका वक्षःस्थल पुष्ट है, (विशालाक्षः) वड़ी-वड़ी आँखें हैं, (लक्ष्मीवान्) वे शोभा की खान और (शुभलक्षणः) 'सामुद्रिक-शास्त्र में वर्णित समस्त' शुभ लक्षणों से युक्त हैं ॥ ११ ॥

धर्मज्ञः सत्यसन्धश्च प्रजानां च हिते रतः ।
यशस्वी ज्ञानसम्पन्नः शुचिर्वश्यः समाधिमान् ॥१२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्वय—धर्मज्ञः, सत्यसन्धः, च, प्रजानां, च, हिते, रतः, यशस्वी, ज्ञानसम्पन्नः, शुचिः, वश्यः, समाधिमान् ॥ १२ ॥

सुशीला टीका—(धर्मज्ञः) वे धर्म के ज्ञाता, (सत्यसन्धः) सत्य पर दृढ रहनेवाले, (च) और (प्रजानां) जनता का (हिते) कल्याण करने में (रतः) सदा तत्पर रहनेवाले हैं। (यशस्वी) वे कीर्तिशाली, (ज्ञानसम्पन्नः) ज्ञानी, (शुचिः) पवित्र, (वश्यः) जितेन्द्रिय और (समाधिमान्) चित्त को एकाग्र रखनेवाले हैं ॥ १२ ॥

प्रजापतिसमः श्रीमान्धाता रिपुनिषूदनः ।
रक्षिता जीवलोकस्य धर्मस्य परिरक्षिता ॥१३॥

अन्वय—प्रजापतिसमः, श्रीमान् , धाता, रिपुनिषूदनः, जीवलोकस्य, रक्षिता, धर्मस्य, परिरक्षिता ॥ १३ ॥

सुशीला टीका—(प्रजापतितुल्यः) वे प्रजापति ब्रह्मा के समान जगत् की रक्षा करनेवाले, (श्रीमान्) लक्ष्मीवान् , (धाता) पिता के तुल्य सब का पालन करनेवाले, (रिपुनिषूदनः) शत्रुओं का संहार करनेवाले, (जीवलोकस्य) प्राणिमात्र के (रक्षिता) संरक्षक और (धर्मस्य) धर्म का (परिरक्षिता) पूर्ण रूप से पालन करनेवाले हैं ॥ १३ ॥

रक्षिता स्वस्य धर्मस्य स्वजनस्य च रक्षिता ।
वेदवेदाङ्गतत्त्वज्ञो धनुर्वेदे च निष्ठितः ॥१४॥

अन्वय—स्वस्य, धर्मस्य, रक्षिता, स्वजनस्य, च, रक्षिता, वेदवेदाङ्गतत्त्वज्ञः, धनुर्वेदे, च, निष्ठितः ॥ १४ ॥

सुशीला टीका—(स्वस्य) वे अपने (धर्मस्य) राजशासन-पद्धति रूपी क्षत्रिय धर्म के (रक्षिता) पालन करनेवाले, (स्वजनस्य) अपने कुटुम्ब के लोगों के (रक्षिता) पालक,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(वेदवेदाङ्गतत्त्वज्ञः) 'ऋक्, यजुः, साम, अथर्व' वेदों और 'शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्यौतिष' वेदाङ्गों के मर्मज्ञ (च) और (धनुर्वेदे) धनुर्वेद में (निष्ठितः) पारङ्गत हैं ॥ १४ ॥

सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः स्मृतिमान्प्रतिभानवान् ।
सर्वलोकप्रियः साधुरदीनात्मा विचक्षणः ॥१५॥

अन्वय—सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः, स्मृतिमान्, प्रतिभानवान्, सर्वलोकप्रियः, साधुः, अदीनात्मा, विचक्षणः, 'च' ॥ १५ ॥

सुशीला टीका—(सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः) वे समस्त शास्त्रों के अर्थ और रहस्य के ज्ञाता, (स्मृतिमान्) स्मरणशक्ति से युक्त 'मेधावी' (प्रतिभानवान्) प्रतिभाशाली, (सर्वलोकप्रियः) समस्त जनता के प्रिय, (साधुः) अत्यन्त सज्जन, (अदीनात्मा) उदार अन्तःकरण वाले ('च') और (विचक्षणः) बड़े व्यवहार-कुशल हैं ॥ १५ ॥

सर्वदाभिगतः सद्भिः समुद्र इव सिन्धुभिः ।
आर्यः सर्वसमश्चैव सदैव प्रियदर्शनः ॥१६॥

अन्वय—इव, सिन्धुभिः, समुद्रः, 'सः', सर्वदा, सद्भिः, अभिगतः, आर्यः, सर्वसमः, एव, च, सदा, एव, प्रियदर्शनः ॥ १६ ॥

सुशीला टीका—(इव) जैसे (सिन्धुभिः) नदियाँ (समुद्रः) सागर से सदा मिलती हैं उसी प्रकार (सर्वदा) सदा ('स') रामजी से (सद्भिः) सत्पुरुष (अभिगतः) बेरोकटोक मिलते रहते हैं, (आर्यः) महाकुलीन, (सर्वसमः) सब से समान भाव रखनेवाले (च) और (सदा एव) सदा ही (प्रियदर्शनः) उनका दर्शन करना बड़ा प्रिय लगता है ॥ १६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स च सर्वगुणोपेतः कौसल्यानन्दवर्धनः ।
समुद्र इव गाम्भीर्ये धैर्येण हिमवानिव ॥१७॥

अन्वय—सर्वगुणोपेतः, सः, कौसल्यानन्दवर्धनः, गाम्भीर्ये, समुद्रः, इव, च, धैर्येण, हिमवान् , इव ॥१७॥

सुशीला टीका—(सर्वगुणोपेतः) सम्पूर्ण गुणों से अलंकृत, (सः) वे रामजी (कौसल्यानन्दवर्धनः) अपनी माता कौसल्या जी के आनन्द बढ़ाने वाले हैं, (गाम्भीर्ये) गम्भीरता में (समुद्रः) सागर की (इव) भाँति 'अथाह' हैं (च) और (धैर्येण) धैर्य में (हिमवान्) हिमालय पर्वत के (इव) समान 'अचल' हैं ॥१७॥

विष्णुना सदृशो वीर्ये सोमवत्प्रियदर्शनः ।
कालाग्निसदृशः क्रोधे क्षमया पृथिवीसमः ॥१८॥

अन्वय—वीर्ये, विष्णुना, सदृशः, सोमवत् , प्रियदर्शनः, क्रोधे, कालाग्निसदृशः, 'च' क्षमया, पृथिवीसमः ॥ १८ ॥

सुशीला टीका—(वीर्ये) पराक्रम में (विष्णुना) विष्णु भगवान् के (सदृशः) समान 'बलशाली' हैं, (सोमवत्) चन्द्रमा के समान (प्रियदर्शनः) उनका दर्शन करना बड़ा प्रिय प्रतीत होता है, (क्रोधे) क्रोध में (कालाग्निसदृशः) प्रलयकालीन संहाराग्नि के समान ('च') और (क्षमया) क्षमा करने में 'सहनशीलता में' (पृथिवीसमः) पृथ्वी की भाँति हैं ॥ १८ ॥

धनदेन समस्त्यागे सत्ये धर्म इवापरः ।

अन्वय—त्यागे, धनदेन, समः, सत्ये, अपरः, धर्मः, इव ।

सुशीला टीका—(त्यागे) दान देने में वे (धनदेन) कुबेर के (समः) समान और (सत्ये) सत्यपालन में (अपरः) दूसरे (धर्मः) धर्मराज के (इव) समान हैं ।

तमेवं गुणसम्पन्नं रामं सत्यपराक्रमम् ॥१९॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ज्येष्ठं ज्येष्ठगुणैर्युक्तं प्रियं दशरथः सुतम् ।
प्रकृतीनां हितैर्युक्तं प्रकृतिप्रियकाम्यया ॥२०॥
यौवराज्येन संयोक्तुमैच्छत्प्रीत्या महीपतिः ।

अन्वय—एवं गुणसम्पन्नं, सत्यपराक्रमं, ज्येष्ठगुणैः, युक्तं, तं, प्रियं, ज्येष्ठं, सुतं, रामं प्रकृतीनां, हितैः, युक्तं, प्रकृतिप्रियकाम्यया, महीपतिः दशरथः, प्रीत्या, यौवराज्येन, संयोक्तुम्, ऐच्छत् ॥१९-२०॥

सुशीला टीका—(एवं) इस प्रकार (गुणसम्पन्नं) अलौकिक गुणों से अलंकृत और (सत्यपराक्रमं) सत्य पराक्रमी 'अमोघ वीर्यशाली' (ज्येष्ठगुणैः युक्तं) श्रेष्ठ गुणशाली अथवा चारों भाइयों में सबसे अधिक गुणवान् (तं) अपने (प्रियं) सबसे प्रिय (ज्येष्ठं) जेठे (सुतं) पुत्र (रामं) रामचन्द्र जी को (प्रकृतीनां) जो प्रजा के (हितैः) कल्याणकारक कार्यों में (युक्तं) लगे रहते थे, (प्रकृतिप्रियकाम्यया) समस्त जनता का हित करने की अभिलाषा से (महीपतिः) महाराज (दशरथः) दशरथ ने (प्रीत्या) प्रीतिपूर्वक (यौवराज्येन) युवराज पद पर (संयोक्तुं) अभिषेक करने का (ऐच्छत्) विचार किया ॥ १९-२० ॥

तस्याभिषेकसम्भारान्दृष्ट्वा भार्याथ कैकयी ॥२१॥
पूर्वं दत्तवरा देवी वरमेनमयाचत ।
विवासनं च रामस्य भरतस्याभिषेचनम् ॥२२॥

अन्वय—अथ, तस्य, अभिषेकसम्भारान्, दृष्ट्वा, भार्या, देवी कैकयी, पूर्वं, दत्तवरा, एनं, वरम्, अयाचत, रामस्य, विवासनं, च, भरतस्य, अभिषेचनम् ॥२१-२२॥

सुशीला टीका-(अथ) अनन्तर अर्थात् रामजी का राज्याभिषेक निश्चित हो जाने के बाद (तस्य) रामजी के (अभिषेकसम्भारान्) राज्याभिषेक की माँगलिक सामग्री को (दृष्ट्वा) देखकर,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(भार्या) राजा दशरथ की धर्मपत्नी (देवी) मँझली रानी (कैकयी) कैकेयी ने--जिसे राजा से (पूर्वं) पहले ही 'देवासुर संग्राम में' (दत्तवरा) दो वर मिल चुके थे--उनसे (एनं) यह (वरं) वर (अयाचत) माँगा कि (रामस्य) रामजी को (विवासनं) 'चौदह वर्ष का' निर्वासन अर्थात् वनवास (च) और (भरतस्य) भरत को (अभिषेचनम्) राज्याभिषेक हो ॥

स सत्यवचनाद्राजा धर्मपाशेन संयतः ।
विवासयामास सुतं रामं दशरथः प्रियम् ॥२३॥

अन्वय-- सः, राजा, दशरथः, सत्यवचनात्, धर्मपाशेन, संयतः, प्रियं, सुतं, रामं, विवासयामास ॥ २३ ॥

सुशीला टीका--(सः) उन (राजा) महाराज (दशरथः) दशरथ ने (सत्यवचनात्) सत्य वचन पालन करने अर्थात् सत्यसन्ध होने के कारण (धर्मपाशेन) धर्मरूपी बन्धन में अर्थात् पूर्व में दो वरदान देने की प्रतिज्ञा में (संयतः) बँधे रहने के कारण (प्रियं) अपने प्यारे (सुतं) पुत्र (रामं) रामजी को (विवासयामास) वनवास दे दिया ॥ २३ ॥

स जगाम वनं वीरः प्रतिज्ञामनुपालयन् ।
पितुर्वचननिर्देशात्कैकेय्याः प्रियकारणात् ॥२४॥

अन्वय--सः, वीरः, कैकेय्याः, प्रियकारणात्, पितुः, वचननिर्देशात्, प्रतिज्ञाम्, अनुपालयन्, वनं, जगाम ॥२४॥

सुशीला टीका--(सः) वे (वीरः) वीर रामजी (कैकेय्याः) कैकेयी का (प्रियकारणात्) प्रिय करने के लिए 'जिसमें उसके पुत्र के राज्याभिषेक के सम्बन्ध में कोई वैधानिक कठिनाई न उपस्थित हो, इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए' (पितुः) पिता की (वचननिर्देशात्)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आज्ञा के अनुसार (प्रतिज्ञां) उनकी प्रतिज्ञा का (अनुपालयन्) पालन करते हुए (वनं) वन को (जगाम) चले ॥ २४ ॥

तं व्रजन्तं प्रियो भ्राता लक्ष्मणोऽनुजगाम ह ।
स्नेहाद्विनयसम्पन्नः सुमित्रानन्दवर्धनः ॥२५॥
भ्रातरं दयितो भ्रातुः सौभ्रात्रमनुदर्शयन् ।

अन्वय—सुमित्रानन्दवर्धनः, विनयसम्पन्नः, भ्राता, लक्ष्मणः, भ्रातुः, दयितः, प्रियः सौभ्रात्रम्, अनुदर्शयन् , स्नेहात् , व्रजन्तं, भ्रातरं, तं, अनुजगाम, ह ॥ २५ ॥

सुशीला टीका—अनन्तर (सुमित्रानन्दवर्धनः) सुमित्रा के आनन्द बढ़ाने वाले (विनयसम्पन्नः) नम्रता के भण्डार (भ्राता) छोटे भाई (लक्ष्मणः) लक्ष्मणजी ने भी—(भ्रातुः) जो अपने बड़े भाई रामजी को (दयितः) बहुत ही (प्रियः) थे—(सौभ्रात्रं) अपने भाई होने के सौजन्य का (अनुदर्शयन्) परिचय देते हुए (स्नेहात्) स्नेहवश (व्रजन्तं) वन को प्रस्थान करने वाले (भ्रातरं) अपने बड़े भाई (तं) रामजी का (अनुजगाम) साथ दिया अर्थात् अनुसरण किया ॥ २५ ॥

रामस्य दयिता भार्या नित्यं प्राणसमा हिता ॥२६॥
जनकस्य कुले जाता देवमायेव निर्मिता ।
सर्वलक्षणसम्पन्ना नारीणामुत्तमा वधूः ॥२७॥
सीताप्यनुगता रामं शशिनं रोहिणी यथा ।
पौरैरनुगतो दूरं पित्रा दशरथेन च ॥२८॥

अन्वय—जनकस्य, कुले, जाता, सीता, अपि, निर्मिता, देवमाया, इव, सर्वलक्षणसम्पन्ना, नारीणाम् , उत्तमा, वधूः, रामस्य, प्राणसमा, दयिता, भार्या, नित्यं, हिता, रामम् , अनुगता, यथा, शशिनं, रोहिणी, पित्रा, दशरथेन, च, पौरैः, दूरम् , अनुगतः ॥ २६–२८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुशीला टीका—(जनकस्य) महाराज जनक के (कुले) वंश में (जाता) उत्पन्न हुई (सीता) सीता (अपि) भी—जो (निर्मिता) उत्पन्न हुई (देवमाया) देवताओं की माया 'मोहिनी' के (इव) समान लावण्यशालिनी, (सर्वलक्षणसम्पन्ना) 'सामुद्रिक शास्त्र में वर्णित समस्त पातिव्रत्य सौभाग्य सुशीलता आदि' शुभलक्षणों से अलंकृत, (नारीणां) महिलाओं में (उत्तमा) सर्वोत्कृष्ट, (वधूः) सूर्यकुल की वहू, महाराज दशरथ की पुत्रबधू , (रामस्य) रामचन्द्रजी की (प्राणसमा) प्राणों के समान (दयिता) प्रिय (भार्या) पत्नी और (नित्यं) सदा ही (हिता) अपने पति का कल्याण चाहने वाली थी (रामं) रामजी के (अनुगता) पीछे-पीछे चली (यथा) जैसे (शशिनं) चन्द्रमा के पीछे (रोहिणी) उसकी प्रियतमा रोहिणी चलती है। उनके अतिरिक्त (पित्रा) पिता (दशरथेन) महाराज दशरथ 'ने अपने मन्त्री सुमन्त्र को सारथि के रूप में साथ में भेजकर' (च) और (पौरैः) अवध नगर की जनता ने (दूरं) वहुत दूर तक (अनुगतः) उनका अनुसरण किया ॥ २६–२८ ॥

शृङ्गवेरपुरे सूतं गङ्गाकूले व्यसर्जयत् ।
गुहमासाद्य धर्मात्मा निषादाधिपतिं प्रियम् ॥२९॥

अन्वय—शृङ्गवेरपुरे, गङ्गाकूले प्रियं, निषादाधिपतिं, गुहम , आसाद्य, धर्मात्मा, सूतं, व्यसर्जयत् ॥ २९ ॥

सुशीला टीका—अनन्तर (शृङ्गवेरपुरे) शृङ्गवेरपुर में (गङ्गा-कूले) गङ्गा नदी के तट पर (प्रियं) अपने प्रिय (निषादाधिपतिं) निषाद जाति के राजा (गुहं) गुह के (आसाद्य) पास पहुँच कर (धर्मात्मा) धर्मपरायण रामजी ने (सूतं) सारथि सुमन्त्र को (व्यसर्जयत्) लौटा दिया ॥ २९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुहेन सहितो रामो लक्ष्मणेन च सीतया।
ते वनेन वनं गत्वा नदीस्तीर्त्वा बहूदकाः ॥३०॥
चित्रकूटमनुप्राप्य भरद्वाजस्य शासनात्।
रम्यमावसथं कृत्वा रममाणा वने त्रयः ॥३१॥
देवगन्धर्वसंकाशास्तत्र ते न्यवसन्सुखम्।

अन्वय—गुहेन, लक्ष्मणेन, च, सीतया, सहितः, रामः, ते, वनेन, वनं, गत्वा, बहूदकाः, नदीः, तीर्त्वा, भरद्वाजस्य, शासनात्, चित्रकूटम्, अनुप्राप्य, तत्र, ते, त्रयः, देवगन्धर्वसङ्काशाः, वने, रममाणाः, रम्यम्, आवसथं, कृत्वा, सुखं, न्यवसन् ॥ ३०–३१ ॥

सुशीला टीका—(गुहेन) निषादाधिपति गुह, (लक्ष्मणेन) लक्ष्मण (च) और (सीतया) सीताजी के (सहितः) साथ (रामः) रामजी—(ते) ये चारों (वनेन) एक वन से (वनं) दूसरे वन में (गत्वा) गये और पथ में पड़नेवाली (बहूदकाः) अगाध जल वाली (नदीः) बहुत-सी नदियों को (तीर्त्वा) पार करके 'महर्षि भरद्वाज के आश्रम में पहुँचे और निषादराज गुह को वहीं से लौटा कर', (भरद्वाजस्य) भरद्वाज मुनि की (शासनात्) आज्ञा से (चित्रकूटं) चित्रकूट पर्वत पर (अनुप्राप्य) पहुँचे। (तत्र) वहाँ (ते) वे (त्रयः) तीनों (देव-गन्धर्व-सङ्काशाः) देवताओं और गन्धर्वों की भाँति (वने) वन में (रममाणाः) विविध प्रकार की लीलाएँ करते हुए (रम्यं) एक मनोहर (आवसथं) पर्णकुटी (कृत्वा) बना कर (सुखं) आनन्दपूर्वक (न्यवसन्) निवास करने 'रहने' लगे ॥ ३०–३१ ॥

चित्रकूटं गते रामे पुत्रशोकातुरस्तदा ॥३२॥
राजा दशरथः स्वर्गं जगाम विलपन्सुतम्।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्वय—रामे, चित्रकूटं, गते 'सति', पुत्रशोकातुरः, राजा, दशरथः, तदा, सुतं, विलपन्, स्वर्गं, जगाम ॥ ३२ ॥

सुशीला टीका—(रामे) राम जी के (चित्रकूटं) चित्रकूट (गते 'सति') चले जाने पर (पुत्रशोकातुरः) पुत्र शोक से विकल (राजा) महाराज (दशरथः) दशरथ (तदा) उस समय (सुतं) पुत्र 'राम का नाम वारम्वार लेकर' (विलपन्) बिलखते हुए (स्वर्गं जगाम) स्वर्गवासी हुए ॥ ३२ ॥

गते तु तस्मिन्भरतो वसिष्ठप्रमुखैर्द्विजैः ॥३३॥
नियुज्यमानो राज्याय नैच्छद्राज्यं महाबलः ।

अन्वय—तस्मिन्, गते, तु, वसिष्ठप्रमुखैः, द्विजैः, राज्याय, नियुज्यमानः, महाबलः, भरतः, राज्यं, न, ऐच्छत् ॥ ३३ ॥

सुशीला टीका—(तस्मिन्) महाराज दशरथ के (गते) परलोकगमन के (तु) अनन्तर (वसिष्ठप्रमुखैः) वसिष्ठ आदि मुख्य-मुख्य (द्विजैः) 'संरक्षक' ब्रह्मर्षियों 'शासनाधिकारियों' द्वारा (राज्याय) राज्यसञ्चालन के लिए (नियुज्यमानः) नियुक्त किए जाने पर भी (महाबलः) महाबली (भरतः) कैकेयीतनय भरत ने (राज्यं) राज्य की (न ऐच्छत्) कामना नहीं की ॥३३॥

स जगाम वनं वीरो रामपादप्रसादकः ॥३४॥
गत्वा तु स महात्मानं रामं सत्यपराक्रमम् ।
अयाचद् भ्रातरं राममार्यभावपुरस्कृतः ॥३५॥
त्वमेव राजा धर्मज्ञ इति रामं वचोऽब्रवीत् ।

अन्वय—सः, वीरः, रामपादप्रसादकः, वनं, जगाम, गत्वा, तु, आर्यभावपुरस्कृतः, सः, भ्रातरं, सत्यपराक्रमं, महात्मानं, रामम्, अयाचत्, 'तथा', वचः, रामम्, अब्रवीत्, धर्मज्ञ, त्वम्, एव, राजा, इति ॥ ३४–३५½ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुशीला टीका—(सः) वे (वीरः) महाबली भरत जी (रामपादप्रसादकः) पूज्य राम जी को मनाने के लिए (वनं) वन को (जगाम) चले गये। (गत्वा तु) वहाँ जाकर (आर्यभावपुरस्कृतः) विनीत वेष से, ज्येष्ठ की मर्यादा का विचार कर, सदाचार की भावना से परिपूर्ण (सः) उन्होंने (भ्रातरं) अपने बड़े भाई (सत्यपराक्रमं) सत्यपराक्रमी, अमोघ वीर्यशाली (महात्मानं) महात्मा (रामं) राम जी से (अयाचत्) प्रार्थना की ('तथा') और यह (वचः) वाक्य (अब्रवीत्) कहा कि (धर्मज्ञ) हे राजधर्म के ज्ञाता ! (त्वं) आप (एव) ही (राजा) राजा (इति) बनें ॥ ३४-३५½ ॥

रामोऽपि परमोदारः सुमुखः सुमहायशाः ॥३६॥
न चैच्छत्पितुरादेशाद्राज्यं रामो महाबलः ।
पादुके चास्य राज्याय न्यासं दत्त्वा पुनः पुनः ॥३७॥
निवर्तयामास ततो भरतं भरताग्रजः ।

अन्वय—परमोदारः, सुमुखः, सुमहायशाः, महाबलः, रामः, अपि, पितुः, आदेशाद् , राज्यं न, ऐच्छत् , च, भरताग्रजः, राज्याय, न्यासं, पादुके, अस्य, दत्वा, पुनः पुनः, भरतं, ततः, निवर्तयामास ॥३६-३७½॥

सुशीला टीका—(परमोदारः) अत्यन्त उदार हृदय, स्वार्थरहित (सुमुखः) प्रसन्नमुख (सुमहायशाः) परम यशस्वी (महाबलः) अतीव पराक्रमशाली (रामः) रामजी ने (अपि) भी (पितुः) अपने पिता की (आदेशात्) आज्ञा का पालन करते हुए (राज्यं) राज्य की (न ऐच्छत्) कामना नहीं की (च) और (भरताग्रजः) उन भरत के जेठे भाई रामजी ने (राज्याय) राज्य करने के लिए (न्यासं) चिह्न स्वरूप अर्थात् अपने प्रतिनिधि स्वरूप में (पादुके) अपनी खड़ाऊँ (अस्य)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भरतजी को (दत्वा) देकर (भरतं) उन्हें (पुनः पुनः) बार-बार समझाते हुए (ततः) चित्रकूट से 'अयोध्या' (निवर्तयामास) लौटा दिया ॥ ३६-३७½ ॥

स काममनवाप्यैव रामपादावुपस्पृशन् ॥३८॥
नन्दिग्रामेऽकरोद्राज्यं रामागमनकाङ्क्षया ।

अन्वय--कामम्, अनवाप्य, एव, सः, रामपादौ, उपस्पृशन्, रामागमनकाङ्क्षया, नन्दिग्रामे, राज्यम्, अकरोत् ॥३८-३९½॥

सुशीला टीका—(कामं) रामजी को लौटा न सकने के कारण, अपनी कामना को (अनवाप्य) मन में लेकर अर्थात् अपरिपूर्ण मनोरथ (एव) ही (सः) भरतजी ने (रामपादौ) रामजी के दोनों चरणों का (उपस्पृशन्) स्पर्श किया 'और लौट आयें' (रामागमनकांक्षया) रामजी के लौटने की अवधि की प्रतीक्षा करते हुए (नन्दीग्रामे) नन्दीग्राम में (राज्यं) राज्य (अकरोत्) करने लगे ॥ ३८-३८½ ॥

गते तु भरते श्रीमान् सत्यसन्धो जितेन्द्रियः ॥३९॥
रामस्तु पुनरालक्ष्य नागरस्य जनस्य च ।
तत्रागमनमेकाग्रो दण्डकान्प्रविवेश ह ॥४०॥

अन्वय—भरते, गते, तु, सत्यसन्धः, जितेन्द्रियः, श्रीमान्, रामः, तु, तत्र, पुनः, नागरस्य, जनस्य, च, आगमनम्, आलक्ष्य, एकाग्रः, 'सन्', दण्डकान्, प्रविवेश, ह ॥ ३९-४० ॥

सुशीला टीका—चित्रकूट से (भरते) भरत जी के (गते तु) लौट जाने पर, (सत्यसन्धः) सत्य प्रतिज्ञा वाले, (जितेन्द्रियः) इन्द्रियों को अपने वश में करनेवाले, (श्रीमान) शोभा के भण्डार (रामस्तु) श्रीरामजी ने (तत्र) वहाँ पर (पुनः) फिर (नागरस्य) अयोध्या नगर निवासी (जनस्य) लोगों का (आगमनं) आना-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जाना न हो जाय (आलक्ष्य) इसकी सम्भावना करके, उनकी दृष्टि से दूर बचने के लिए (एकाग्रः) अविचलभाव से (दण्डकान्) दण्डक वन में (प्रविवेश) प्रवेश किया ॥ ३९–४० ॥

प्रविश्य तु महारण्यं रामो राजीवलोचनः।
विराधं राक्षसं हत्वा शरभङ्गं ददर्श ह ॥४१॥
सुतीक्ष्णं चाप्यगस्त्यं च अगस्त्यभ्रातरं तथा।

अन्वय—महारण्यं, तु, प्रविश्य, राजीवलोचनः, रामः, विराधं, राक्षसं, हत्वा, शरभङ्गं, सुतीक्ष्णं, च, अगस्त्यं, च, अपि, तथा, अगस्त्यभ्रातरं, ददर्श ह ॥ ४१–४१½ ॥

सुशीला टीका—(महारण्यं तु) उस दण्डक महावन में (प्रविश्य) जाकर (राजीवलोचनः) कमल के समान नेत्रवाले (रामः) रामजी ने (विराधं) विराध नामक (राक्षसं) राक्षस को (हत्वा) मारकर (शरभङ्गं) शरभङ्ग मुनि (सुतीक्ष्णं) सुतीक्ष्ण मुनि (च) और (अगस्त्यं) महर्षि अगस्त्य (तथा) एवं (अगस्त्यभ्रातरं) अगस्त्य जी के भाई सुदर्शन मुनि का (ददर्श) दर्शन किया ॥ ४१–४१½ ॥

अगस्त्यवचनाच्चैव जग्राहैन्द्रं शरासनम् ॥४२॥
खड्गं च परमप्रीतस्तूणी चाक्षयसायकौ।

अन्वय—अगस्त्यवचनात्, च, एव, ऐन्द्रं, शरासनं, खड्गं, च, परमप्रीतः, अक्षयसायकौ, तूणी, च, जग्राह ॥४२-४२½॥

सुशीला टीका—फिर (अगस्त्यवचनात्, चैव) अगस्त्य मुनि के कहने से ही उन्होंने (ऐन्द्रं) इन्द्र के (शरासनं) धनुष (च) और इन्द्र के (खड्गं) एक खड्ग 'तलवार' (च) और इन्द्र के (तूणी) दो तूणीर 'तरकस' (अक्षयसायकौ) जिनके बाण

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कभी घटते ही नहीं थे, (परमप्रीतः) अत्यन्त प्रसन्नता के साथ (जग्राह) ग्रहण किये ॥ ४२-४२½ ॥

वसतस्तस्य रामस्य वने वनचरैः सह ॥४३॥
ऋषयोऽभ्यागमन्सर्वे वधायासुररक्षसाम् ।

अन्वय—वने, वनचरैः, सह, वसतः, तस्य, रामस्य, असुर-रक्षसां, वधाय, सर्वे, ऋषयः, अभ्यागमन् ॥४३-४३½॥

सुशीला टीका—अनन्तर (वने) वन में (वनचरैः) वनचरों के (सह) साथ (वसतः) रहने वाले (तस्य) उन (रामस्य) राम जी के पास (असुर-रक्षसां) 'कवन्ध आदि' असुरों और 'खर-दूषण आदि' राक्षसों के (वधाय) वध के निमित्त प्रार्थना करने के लिए (सर्वे) उस वन के सभी (ऋषयः) ऋषि मुनि लोग (अभ्यागमन्) आये ॥ ४३-४३½ ॥

स तेषां प्रतिशुश्राव राक्षसानां तदा वने ॥४४॥
प्रतिज्ञातश्च रामेण वधः संयति रक्षसाम् ।
ऋषीणामग्निकल्पानां दण्डकारण्यवासिनाम् ॥४५॥

अन्वय—तदा, वने, सः, दण्डकारण्यवासिनाम, अग्निकल्पानां, तेषाम् , ऋषीणां, राक्षसानां, वधः, प्रतिशुश्राव, च, संयति, रक्षसां, वधः, प्रतिज्ञातः ॥ ४४-४५ ॥

सुशीला टीका—(तदा) उस समय (वने) वन में (सः) राम जी ने (दण्डकारण्यवासिनां) दण्डक वन में रहने वाले (अग्निकल्पानां) अग्नि के समान तेजस्वी (तेषां) उन (ऋषीणां) ऋषियों के सम्मुख (राक्षसानां) 'खर-दूषण आदि' राक्षसों के (वधः) संहार करने का (प्रतिशुश्राव) वचन दिया (च) और (संयति) युद्ध में (रक्षसां) उन राक्षसों के (वधः) वध की (प्रतिज्ञातः) प्रतिज्ञा की ॥ ४४-४५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेन तत्रैव वसता जनस्थाननिवासिनी ।
विरूपिता शूर्पणखा राक्षसी कामरूपिणी ॥४६॥

अन्वय— तत्र, एव, वसता, तेन, जनस्थाननिवासिनी, कामरूपिणी, शूर्पणखा, राक्षसी, विरूपिता ॥ ४६ ॥

सुशीला टीका—(तत्र एव) उसी दण्डकारण्य में (वसता) रहते हुए (तेन) रामजी ने (जनस्थाननिवासिनी) जनस्थान में रहने वाली (कामरूपिणी) अपनी इच्छा से विविध रूप धारण करने वाली (शूर्पणखा) शूर्पणखा नामकी (राक्षसी) राक्षसी को 'लक्ष्मण जी के द्वारा उसकी नाक कटा कर' (विरूपिता) कुरूप बना दिया ॥ ४६ ॥

ततः शूर्पणखावाक्यादुद्युक्तान्सर्वराक्षसान् ।
खरं त्रिशिरसं चैव दूषणं चैव राक्षसम् ॥४७॥
निजघान रणे रामस्तेषां चैव पदानुगान् ।

अन्वय—ततः, शूर्पणखावाक्याद्, उद्युक्तान्, सर्वराक्षसान्, चैव, खरं, दूषणं, त्रिशिरसं, राक्षसं, चैव, तेषां, पदानुगान्, रामः, रणे, निजघान ॥ ४७-४७½ ॥

सुशीला टीका—(ततः) तब 'अर्थात् शूर्पणखा की नाक कट जाने के बाद' (शूर्पणखावाक्यात्) शूर्पणखा के धिक्कारने से (उद्युक्तान्) चढ़ाई करने वाले (सर्वराक्षसान्) समस्त राक्षसों को (चैव) और 'उनके प्रधान' (खरं) खर (दूषणं) दूषण (त्रिशिरसं) त्रिशिरा (राक्षसं) राक्षसपति (चैव) और (तेषां) उनके (पदानुगान्) अधीनस्थ सेनापतियों को (रामः) रामजी ने (रणे) समर में (निजघान) मार डाला ॥ ४७-४७½ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वने तस्मिन्निवसता जनस्थाननिवासिनाम् ॥४८॥
रक्षसां निहतान्यासन्सहस्राणि चतुर्दश ।

अन्वय—तस्मिन्, वने, निवसता, 'रामेण', जनस्थाननिवासिनां, चतुर्दश, सहस्राणि, रक्षसां, निहतानि, आसन् ॥ ४८-४८½ ॥

सुशीला टीका—(तस्मिन्) उस (वने) वन में (निवसता) निवास करते हुए ('रामेण') रामजी ने (जनस्थाननिवासिनां) जनस्थान के सैनिक शिविर में रहनेवाले (चतुर्दश) चौदह (सहस्राणि) हजार (रक्षसां) राक्षसों का (निहतानि) संहार (आसन्) कर डाला ॥ ४८-४८½ ॥

ततो ज्ञातिवधं श्रुत्वा रावणः क्रोधमूर्च्छितः ॥४९॥
सहायं वरयामास मारीचं नाम राक्षसम् ।

अन्वय—ततः, 'शूर्पणखामुखात्', ज्ञातिवधं, श्रुत्वा, रावणः, क्रोधमूर्च्छितः, मारीचं, नाम, राक्षसं, सहायं, वरयामास ॥ ४९-४९½ ॥

सुशीला टीका—(ततः) उसके बाद ('शूर्पणखामुखात्') 'शूर्पणखा के मुख से' (ज्ञातिवधं) अपने परिवार 'सौतेले भाई खर आदि' के वध का वृत्तान्त (श्रुत्वा) सुनकर (रावणः) लङ्काधिपति राक्षस-सम्राट् रावण (क्रोधमूर्च्छितः) क्रोध से आग-बबूला हो उठा और 'उसने सीताहरण के लिए' (मारीचं) मारीच (नाम) नाम के (राक्षसं) राक्षस से (सहायं) सहायता (वरयामास) माँगी ॥ ४९-४९½ ॥

वार्यमाणः सुबहुशो मारीचेन स रावणः ॥५०॥
न विरोधो बलवता क्षमो रावण तेन ते ।

अन्वय—मारीचेन, 'हे' रावण !, तेन, बलवता, ते, विरोधः, न, क्षमः, सः, रावणः, सुबहुशः, वार्यमाणः ॥ ५०-५०½ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुशीला टीका—यद्यपि (मारीचेन) मारीच ने यह कहकर कि ('हे' रावण!) 'हे रावण! (तेन) उन (वलवता) अलौकिक वीर्यशाली राम जी के साथ (ते) तुम्हारा (विरोधः) विरोध, वैरभाव, शत्रुता (क्षमः) ठीक (न) नहीं है' (सः) उस (रावणः) रावण को (सुबहुशः) वार-वार (वार्यमाणः) मना किया ॥ ५०–५०½ ॥

अनादृत्य तु तद्वाक्यं रावणः कालचोदितः ॥५१॥
जगाम सहमारीचस्तस्याश्रमपदं तदा ।

अन्वय—तु, तदा, कालचोदितः, 'सन्' रावणः, तद्वाक्यम्, अनादृत्य, सहमारीचः, तस्य, आश्रमपदं, जगाम ॥ ५१–५१½ ॥

सुशीला टीका—(तु) किन्तु (तदा) उस समय (कालचोदितः) मृत्यु की प्रेरणा से, उसका काल समीप आ रहा था इस से (रावणः) रावण ने (तद्वाक्यं) मारीच के समझाने-बुझाने की (अनादृत्य) उपेक्षा कर दी और (सहमारीचः) उसके साथ ही, उसे साथ लेकर वह (तस्य) रामजी के (आश्रमपदं) आश्रमस्थल पर (जगाम) गया ॥ ५१–५१½ ॥

तेन मायाविना दूरमपवाह्य नृपात्मजौ ॥५२॥
जहार भार्यां रामस्य गृध्रं हत्वा जटायुषम् ।

अन्वय—तेन, मायाविना, नृपात्मजौ, दूरम्, अपवाह्य, रामस्य, भार्यां, जहार, जटायुषं, गृध्रं, हत्वा ॥ ५२–५२½ ॥

सुशीला टीका—(तेन) वह (मायाविना) मायाविशारद 'वहुरूपिया' मारीच 'सोने के मृग का रूप बनाकर' (नृपात्मजौ) दोनों राजकुमारों राम-लक्ष्मण को (दूरं) पर्णकुटी से दूर (अपवाह्य) ले गया और इधर रावण ने (रामस्य) रामजी की (भार्यां) धर्मपत्नी सीता जी का (जहार) हरण कर लिया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

'मार्ग में विघ्न उपस्थित करने के कारण उसने' (जटायुषं) जटायु नामक (गृध्रं) गृध्र को (हत्वा) मार डाला ॥ ५२-५२½ ॥

गृध्रं च निहतं दृष्ट्वा हृतां श्रुत्वा च मैथिलीम् ॥५३॥
राघवः शोकसन्तप्तो विललापाकुलेन्द्रियः ।

अन्वय—गृध्रं, निहतं, दृष्ट्वा, च, मैथिलीं, हृतां, श्रुत्वा, च, राघवः, शोकसन्तप्तः, विललाप, आकुलेन्द्रियः ॥ ५३-५३½ ॥

सुशीला टीका—'मायारूपी मृग को मारकर, आश्रम में आने पर. जब सीता जी न दिखायीं पड़ीं तो उन्हें ढूँढ़ते हुए आगे बढ़ने पर' (गृध्रं) गृध्रराज जटायु को (निहतं) घायल (दृष्ट्वा) देखा (च) और 'उसी के द्वारा' (मैथिलीं) सीताजी का 'रावण द्वारा' (हृतां) अपहरण (श्रुत्वा) सुन कर (राघवः) रामजी (शोकसन्तप्तः) शोक से व्यथित होकर (विललाप) विलाप करने लगे, 'उस समय' (आकुलेन्द्रियः) 'अपार दुःख के कारण' उनकी सारी इन्द्रियां विकल हो रही थीं ॥ ५३-५३½ ॥

ततस्तेनैव शोकेन गृध्रं दग्ध्वा जटायुषम् ॥५४॥
मार्गमाणो वने सीतां राक्षसं संददर्श ह ।
कबन्धं नाम रूपेण विकृतं घोरदर्शनम् ॥५५॥

अन्वय—ततः, तेन, एव, शोकेन, जटायुषं, गृध्रं, दग्ध्वा, वने, सीतां, मार्गमाणः, सः, कबन्धं, नाम, राक्षसं, ददर्श, रूपेण, विकृतं, घोरदर्शनं, ह ॥ ५४-५५ ॥

सुशीला टीका—(ततः) जटायु के मुँह से सीताहरण का वृत्तान्त सुनने के बाद (तेन एव) उसी सीताहरण-जनित (शोकेन) प्रबल शोक के कारण मृत (जटायुषं) जटायु (गृध्रं) गृध्र का (दग्ध्वा) अग्नि संस्कार करके 'आगे बढ़ने पर' (वने) वन में (सीतां) सीताजी को (मार्गमाणः) ढूँढ़ते हुए (सः)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उन्होंने (कबन्धं) कवन्ध (नाम) नामक (राक्षसं) राक्षस को (ददर्श) देखा—जो (रूपेण) आकार में (विकृतं) अङ्ग-भङ्ग युक्त 'अर्थात् इन्द्र के वज्र प्रहार से उसका शिर पेट में घुस गया था' और (घोरदर्शनं) देखने में बड़ा भयङ्कर लग रहा था ॥ ५४-५५ ॥

तं निहत्य महाबाहुर्ददाह स्वर्गतश्च सः।
स चास्य कथयामास शवरीं धर्मचारिणीम् ॥५६॥
श्रमणां धर्मनिपुणामभिगच्छेति राघव।

अन्वय—महाबाहुः, तं, निहत्य, ददाह, सः, च, स्वर्गतः। सः, च, धर्मचारिणीं, शवरीं, कथयामास, राघव, धर्मनिपुणां, श्रमणाम्, अभिगच्छ, इति ॥ ५६-५६½ ॥

सुशीला टीका—(महाबाहुः) लम्बी भुजाओं वाले रामजी ने (तं) उस कवन्ध को (निहत्य) मार कर उसकी भी (ददाह) दाहक्रिया की (च) और (सः) वह (स्वर्गतः) 'गन्धर्व रूप धारणकर' स्वर्ग को चला गया। 'स्वर्ग जाते समय' (सः) उसने (धर्मचारिणीं) धर्म का आचरण करने वाली (शवरीं) शवरी का (कथयामास) पता वतलाया और कहा कि (राघव) हे रघु-कुल-तिलक ! आप (धर्मनिपुणां) धर्म के तत्त्व को जानने वाली (श्रमणां) परिव्राजिका, तपस्विनी शवरी के पास (अभिगच्छ) जाइए ॥ ५६-५६½ ॥

सोऽभ्यगच्छन्महातेजाः शवरीं शत्रुसूदनः ॥५७॥
शवर्या पूजितः सम्यग्रामो दशरथात्मजः।
पम्पातीरे हनुमता सङ्गतो वानरेण ह ॥५८॥

अन्वय—शत्रुसूदनः, महातेजाः, सः, शबरीम्, अभ्यगच्छत्।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शबर्या, दशरथात्मजः, रामः, सम्यक्, पूजितः। पम्पातीरे, हनुमता, वानरेण, संगतः, ह ॥ ५७-५८ ॥

सुशीला टीका—(शत्रुसूदनः) शत्रुओं का संहार करनेवाले (महातेजाः) महान् तेजस्वी (सः) रामजी (शबरीं) शबरी के यहाँ (अभ्यगच्छत्) गये। (शबर्या) शबरी ने (दशरथात्मजः) महाराजाधिराज दशरथ के राजकुमार (रामः) रामजी का (सम्यक्) समुचित विधि के साथ (पूजितः) पूजन किया। अनन्तर वे (पम्पातीरे) पम्पा सरोवर के तट पर (हनुमता) हनुमान् नाम के (वानरेण) वानर से (संगतः) मिले ॥५७-५८॥

हनुमद्वचनाच्चैव सुग्रीवेण समागतः।
सुग्रीवाय च तत्सर्वं शंसद्रामो महाबलः ॥५९॥
आदितस्तद्यथावृत्तं सीतायाश्च विशेषतः।

अन्वय—हनुमद्वचनात्, च, एव, सुग्रीवेण, समागतः। महाबलः, रामः, आदितः, यथावृत्तं, तत्, सर्वं, विशेषतः सीतायाः, च, 'यथावृत्तं', सुग्रीवाय, शंसत् ॥ ५९-५९½ ॥

सुशीला टीका—(हनुमद्वचनात्) हनुमान् जी के कहने से (एव) ही उन्होंने (सुग्रीवेण) सुग्रीव से (समागतः) मित्रता की। (महाबलः) महाबलशाली (रामः) रामजी ने (आदितः) आरम्भ से अर्थात् जन्म, विवाह, राज्यतिलक, वनवास आदि से लेकर (यथावृत्तं) अब तक जो कुछ वृत्तान्त हुआ था (तत्) वह (सर्वं) सब (च) और (विशेषतः) विशेष विस्तार के साथ (सीतायाः) सीताजी के (यथावृत्तं) हरण आदि सब वृत्तान्त को (सुग्रीवाय) सुग्रीव जी से (शंसत्) कह दिया ॥५९-५९½॥

सुग्रीवश्चापि तत्सर्वं श्रुत्वा रामस्य वानरः ॥६०॥
चकार सख्यं रामेण प्रीतश्चैवाग्निसाक्षिकम्।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्वय—च, वानरः, सुग्रीवः, अपि, रामस्य, तत्, सर्वं, श्रुत्वा, रामेण, 'सह', एव, प्रीतः, अग्निसाक्षिकं, सख्यं, चकार ॥ ६०-६०½ ॥

सुशीला टीका—(च) और (वानरः) वानर (सुग्रीवः) सुग्रीव ने (अपि) भी (रामस्य) रामजी की (तत्) राज्य-तिलक, वनवास और सीताहरण के सम्बन्ध की (सर्वं) सभी बातें (श्रुत्वा) सुनकर (रामेण 'सह') उनके साथ (एव) ही (प्रीतः) प्रेमपूर्वक (अग्निसाक्षिकं) अग्नि को साक्षी बनाकर (सख्यं) मित्रता (चकार) की ॥ ६०-६०½ ॥

ततो वानरराजेन वैरानुकथनं प्रति ॥६१॥
रामायावेदितं सर्वं प्रणयाद् दुःखितेन च ।

अन्वय—ततः, वानरराजेन, प्रणयात्, वैरानुकथनं, प्रति, सर्वं, रामायः, दुःखितेन, आवेदितम् ॥ ६१-६१½ ॥

सुशीला टीका—(ततः) मैत्री हो जाने के बाद (वानर-राजेन) वानरों के राजा सुग्रीव ने (प्रणयात्) स्नेहवश (वैरानु-कथनं प्रति) अपने बड़े भाई वालि के साथ शत्रुता होने की (सर्वं) सारी कहानी (रामाय) रामजी से (दुःखितेन) बड़े दुःखित मन से (आवेदितम्) कह सुनायी ॥ ६१-६१½ ॥

प्रतिज्ञातं च रामेण तदा वालिवधं प्रति ॥६२॥
वालिनश्च बलं तत्र कथयामास वानरः ।
सुग्रीवः शङ्कितश्चासीन्नित्यं वीर्येण राघवे ॥६३॥

अन्वय—तदा, रामेण, च, वालिवधं, प्रति, प्रतिज्ञातम् । 'किन्तु', वानरः, सुग्रीवः, तत्र, वालिनः, बलं, च, कथयामास, 'यतः', 'सः', राघवे, वीर्येण, नित्यं, शङ्कितः, च, चासीत् ॥ ६२-६३ ॥

सुशीला टीका—(तदा) सुग्रीव की दुःख-गाथा सुनने के समय ही (रामेण) रामजी ने (वालिवधं प्रति) वालि को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मारने की (प्रतिज्ञातम्) प्रतिज्ञा की ('किन्तु') परन्तु (वानरः) वानर (सुग्रीवः) सुग्रीव ने (तत्र) वहाँ 'किष्किन्धा में' (वालिनः) वालि के (वलं) पराक्रम का 'अर्थात् किस प्रकार उसने रावण को काँख में दवा लिया था आदि विक्रम गाथा का' (कथयामास) विस्तार के साथ वर्णन किया। ('यतः सः') क्योंकि उसे (राघवे) रामजी के (वीर्येण) बल के सम्बन्ध में (नित्यं) सदा (शङ्कितः) सन्देह ही (आसीत्) रहा करता था ॥ ६२–६३ ॥

राघवप्रत्ययार्थं तु दुन्दुभेः कायमुत्तमम् ।
दर्शयामास सुग्रीवो महापर्वतसन्निभम् ॥६४॥

अन्वय—राघवप्रत्ययार्थं, तु, सुग्रीवः, महापर्वतसन्निभं, दुन्दुभेः, उत्तमं, कायं, दर्शयामास ॥ ६४ ॥

सुशीला टीका—(राघवप्रत्ययार्थं) रामजी को 'वालि के बल के सम्बन्ध में' विश्वास दिलाने के लिए (सुग्रीवः) सुग्रीव ने (महापर्वतसन्निभं) अति विशाल पर्वत के आकार का (दुन्दुभेः) दुन्दुभि राक्षस का (उत्तमं) उन्नत अथवा वालि के पराक्रम का सूचक (कायं) शरीर 'अस्थिपञ्जर' (दर्शयामास) दिखलाया ॥ ६४ ॥

उत्स्मयित्वा महाबाहुः प्रेक्ष्य चास्थि महाबलः ।
पादाङ्गुष्ठेन चिक्षेप सम्पूर्णं दशयोजनम् ॥६५॥

अन्वय—महाबलः, महाबाहुः, उत्स्मयित्वा, अस्थि, प्रेक्ष्य, च, पादाङ्गुष्ठेन, सम्पूर्णं, दशयोजनं, चिक्षेप ॥ ६५ ॥

सुशीला टीका—(महाबलः) अतीव बलशाली (महाबाहुः) लम्बी भुजावाले रामजी ने (उत्स्मयित्वा) तनिक मुस्कराकर (अस्थि) उस हड्डी की ढेर की ओर (प्रेक्ष्य) देखा (च)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

और (पादाङ्गुष्ठेन) अपने पैर के अँगूठे से ही उसे (सम्पूर्णं) पूरे (दशयोजनं) दस योजन 'चालीस कोस' की दूरी पर (चिक्षेप) फेंक दिया ॥ ६५ ॥

विभेद च पुनस्तालान्सप्तैकेन महेषुणा ।
गिरिं रसातलं चैव जनयन्प्रत्ययं तदा ॥६६॥

अन्वय—पुनः, प्रत्ययं, जनयन्, तदा, 'सः' एकेन, महेषुणा, सप्त, तालान्, गिरिं च, रसातलम्, एव, विभेद ॥ ६६ ॥

सुशीला टीका—(पुनः) फिर 'सुग्रीव के मन में वालि के वध के सम्बन्ध में' (प्रत्ययं) विश्वास (जनयन्) दिलाते हुए (तदा) उसी समय ('सः') रामजी ने (एकेन) एक ही (महेषुणा) महान् 'दिव्य' वाण से (सप्त) सात (तालान्) वड़े-वड़े ताड़ के वृक्षों को (गिरिं) पर्वत को (च) और (रसातलं) पाताल लोक को (एव) भी (विभेद) वेंध दिया ॥ ६६ ॥

ततः प्रीतमनास्तेन विश्वस्तः स महाकपिः ।
किष्किन्धां रामसहितो जगाम च गुहां तदा ॥६७॥

अन्वय—ततः, तेन सः, महाकपिः, प्रीतमनाः, विश्वस्तः, तदा, रामसहितः, किष्किन्धां, गुहां, च, जगाम ॥ ६७ ॥

सुशीला टीका—(ततः) तव, रामजी का पराक्रम देखने के वाद (तेन) उस सप्ततालभेदन के कार्य से (सः) वे (महाकपिः) वानरराज सुग्रीव (प्रीतमनाः) मन-ही-मन बड़े प्रसन्न हुए और (विश्वस्तः) उन्हें रामजी पर भरोसा हो गया (च) और वे (तदा) तत्क्षण (रामसहितः) उनके साथ (किष्किन्धां) किष्किन्धा की (गुहां) गुहा की ओर (जगाम) चले ॥ ६७ ॥

ततोऽगर्जद्धरिवरः सुग्रीवो हेमपिङ्गलः ।
तेन नादेन महता निर्जगाम हरीश्वरः ॥६८॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनुमान्य तदा तारां सुग्रीवेण समागतः ।
निजघान च तत्रैनं शरेणैकेन राघवः ॥६९॥

अन्वय—ततः, हेमपिङ्गलः, हरिवरः, सुग्रीवः, अगर्जत् । तेन, महता, नादेन, हरीश्वरः, ताराम्, अनुमान्य, तदा, निर्जगाम, च, सुग्रीवेण, समागतः, तत्र, राघवः, एनम्, एकेन, शरेण, निजघान ॥ ६८-६६ ॥

सुशीला टीका—(ततः) किष्किन्धा में पहुँचने के बाद (हेमपिङ्गलः) सुवर्ण के समान पीले रंगवाले (हरिवरः) वानरों में श्रेष्ठ सुग्रीव ने (अगर्जत्) गर्जना की । (तेन) उस (महता) महान् (नादेन) गर्जना को सुनकर (हरीश्वरः) वानराधिपति बालि (तारां) अपनी स्त्री तारा को 'जो बालि को राम जी और सुग्रीव से युद्ध न करने के लिए आग्रह कर रही थी उसको' (अनुमान्य) आश्वासन देकर (तदा) उसी समय (निर्जगाम) 'किष्किन्धापुरी की गुहा से' बाहर निकल आया (च) और (सुग्रीवेण) सुग्रीव के साथ आकर (समागतः) भिड़ गया (तत्र) उस युद्ध में 'सुग्रीव की पराजय की कल्पना कर' (राघवः) राम जी ने (एनं) बालि को (एकेन) एक ही (शरेण) बाण से (निजघान) मार गिराया ॥ ६८–६९ ॥

ततः सुग्रीववचनाद्धत्वा वालिनमाहवे ।
सुग्रीवमेव तद्राज्ये राघवः प्रत्यपादयत् ॥७०॥

अन्वय—ततः, राघवः, सुग्रीववचनात्, आहवे, वालिनं, हत्वा, तद्राज्ये, सुग्रीवम्, एव, प्रत्यपादयत् ॥ ७० ॥

सुशीला टीका—(ततः) अनन्तर (राघवः) रामजी ने (सुग्रीववचनात्) 'वालि के घूँसे से विकल हुए' सुग्रीव के कहने से (आहवे) युद्ध में (वालिनं) वालि को (हत्वा) मार कर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(तद्राज्ये) उसके राज्यसिंहासन पर (सुग्रीवं) सुग्रीव को (एव) ही (प्रत्यपादयत्) बैठा दिया ॥ ७० ॥

स च सर्वान्समानीय वानरान्वानरर्षभः ।
दिशः प्रस्थापयामास दिदृक्षुर्जनकात्मजाम् ॥७१॥

अन्वय—च, सः, वानरर्षभः, सर्वान्, वानरान्, समानीय, जनकात्मजां, दिदृक्षुः, दिशः, प्रस्थापयामास ॥ ७१ ॥

सुशीला टीका—(च) और (सः) उन (वानरर्षभः) कपिराज सुग्रीव ने (सर्वान्) 'वानर साम्राज्य के अन्तर्गत रहने-वाले' सभी (वानरान्) वानरों को (समानीय) बुलाकर उन्हें (जनकात्मजां) राजा जनक की राजकुमारी सीताजी को (दिदृक्षुः) ढूँढ़ने के लिए (दिशः) चारों दिशाओं में (प्रस्थापयामास) भेजा ॥ ७१ ॥

ततो गृध्रस्य वचनात्सम्पातेर्हनुमान्बली ।
शतयोजनविस्तीर्णं पुप्लुवे लवणार्णवम् ॥७२॥

अन्वय—ततः, सम्पातेः, गृध्रस्य, वचनात्, बली, हनुमान्, शतयोजनविस्तीर्णं, लवणार्णवं, पुप्लुवे ॥ ७२ ॥

सुशीला टीका—(ततः) सीता जी को ढूँढ़ते-ढूँढ़ते सागर तट पर पहुँचने के बाद (सम्पातेः) सम्पाति नामक (गृध्रस्य) गृध्र के (वचनात्) कहने से (बली) बलशाली (हनुमान्) हनुमान् जी (शतयोजनविस्तीर्णं) सौ योजन 'चार सौ कोस' चौड़े (लवणार्णवं) लवण सागर को (पुप्लुवे) लाँघ कर पार चले गये ॥ ७२ ॥

तत्र लङ्कां समासाद्य पुरीं रावणपालिताम् ।
ददर्श सीतां ध्यायन्तीमशोकवनिकां गताम् ॥७३॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्वय—तत्र, रावणपालितां, लङ्कां, पुरीं, समासाद्य, अशोकवनिकां, गतां, सीतां, ध्यायन्तीं, ददर्श ॥ ७३ ॥

सुशीला टीका—(तत्र) उस दक्षिण सागर के तट पर स्थित (रावणपालितां) राक्षसराज रावण द्वारा रक्षित (लङ्कां) लङ्का (पुरीं) नगरी में (समासाद्य) पहुँच कर 'हनुमान् जी ने' (अशोकवनिकां) अशोकवाटिका में (गतां) बैठी हुई (सीतां) सीता जी को (ध्यायन्तीं) गाढ चिन्ता में निमग्न (ददर्श) देखा ॥ ७३ ॥

निवेदयित्वाभिज्ञानं प्रवृत्तिं विनिवेद्य च ।
समाश्वास्य च वैदेहीं मर्दयामास तोरणम् ॥७४॥

अन्वय—अभिज्ञानं, निवेदयित्वा, प्रवृत्तिं, विनिवेद्य, च, वैदेहीं, समाश्वास्य, तोरणं, मर्दयामास ॥ ७४ ॥

सुशीला टीका—हनुमान् जी ने सीता जी को (अभिज्ञानं) राम जी का चिह्न 'मुद्रिका' (निवेदयित्वा) देकर (प्रवृत्तिं) 'सुग्रीव-मित्रता और राम जी का' सन्देश (विनिवेद्य) कह सुनाया (च) और (वैदेहीं) जानकी जी को (समाश्वास्य) 'शीघ्र रावण को मार कर राम जी आपको दर्शन देंगे आदि बातों से' आश्वासन अर्थात् सान्त्वना देकर (तोरणं) अशोक-वाटिका का बाहरी फाटक (मर्दयामास) तोड़ डाला ॥ ७४ ॥

पञ्च सेनाग्रगान्हत्वा सप्त मन्त्रिसुतानपि ।
शूरमक्षं च निष्पिष्य ग्रहणं समुपागमत् ॥७५॥

अन्वय—पञ्च, सेनाग्रगान्, च, सप्त, मन्त्रिसुतान्, अपि, हत्वा, शूरम्, अक्षं, निष्पिष्य, ग्रहणं, समुपागमत् ॥ ७५ ॥

सुशीला टीका—अनन्तर हनुमान् जी रावण के (पञ्च) पाँच (सेनाग्रगान्) 'पिङ्गलनेत्रादि' सेनापतियों (च) और (सप्त)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सात (मन्त्रिसुतान्) 'जाम्बमाली आदि' मन्त्रियों के पुत्रों को (अपि) भी (हत्वा) मार कर (शूरं) शूर-वीर (अक्षं) अक्षय कुमार को (निष्पिष्य) पञ्चत्व में मिला कर 'रावण की सभा को देखने के उद्देश्य से स्वेच्छा से' (ग्रहणं) 'मेघनाद के ब्रह्मास्त्र के' बन्धन में अपने को (समुपागमत्) बँधा लिया ॥७५॥

अस्त्रेणोन्मुक्तमात्मानं ज्ञात्वा पैतामहाद्वरात् ।
मर्षयन्राक्षसान् वीरो यन्त्रिणस्तान्यदृच्छया ॥७६॥

अन्वय—वीरः, पैतामहात्, वरात्, आत्मानम्, अस्त्रेण, उन्मुक्तं, ज्ञात्वा, यदृच्छया, तान्, यन्त्रिणः, राक्षसान्, मर्षयन् ॥ ७६ ॥

सुशीला टीका—(वीरः) वीरवर हनुमान जी ने (पैतामहात्) पितामह ब्रह्माजी के (वरात्) वरदान से (आत्मानं) अपने को (अस्त्रेण) ब्रह्म-पाश से (उन्मुक्तं) छूटा हुआ (ज्ञात्वा) जानकर (यदृच्छया) अपनी इच्छा से (तान्) उन (यन्त्रिणः) बाँधने वाले (राक्षसान्) राक्षसों का (मर्षयन्) अपराध सहन कर लिया ॥ ७६ ॥

ततो दग्ध्वा पुरीं लङ्कामृते सीतां च मैथिलीम् ।
रामाय प्रियमाख्यातुं पुनरायान्महाकपिः ॥७७॥

अन्वय—ततः, मैथिलीं, सीतां, च, ऋते, लङ्कां, पुरीं, दग्ध्वा, महाकपिः, रामाय, प्रियम्, आख्यातुं, पुनः, आयात् ॥७७॥

सुशीला टीका—(ततः) 'रावण की सभा में आने, उससे वार्तालाप करने और उसकी आज्ञा से राक्षसों द्वारा पूँछ में आग लगा देने के' अनन्तर (मैथिलीं) मैथिल राजकुमारी (सीतां) सीता जी 'की अशोकवाटिका' को (च) और अर्थात् विभीषण के भवन को (ऋते) छोड़ कर (लङ्कां) सारी लङ्का (पुरीं) पुरी को (दग्ध्वा) जला कर (महाकपिः) वानराग्रगण्य हनुमान् जी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(रामाय) रामजी को (प्रियं) सीता-मिलन रूपी प्रिय सन्देश (आख्यातुं) सुनाने के लिए (पुनः) फिर 'किष्किन्धा' (आयात्) लौट आये ॥ ७७ ॥

सोऽभिगम्य महात्मानं कृत्वा रामं प्रदक्षिणम् ।
न्यवेदयदमेयात्मा दृष्टा सीतेति तत्त्वतः ॥७८॥

अन्वय—अमेयात्मा, सः, महात्मानं, रामम् , अभिगम्य प्रदक्षिणं, कृत्वा, न्यवेदयत् , तत्त्वतः, सीता, दृष्टा, इति ॥ ७८ ॥

सुशीला टीका—(अमेयात्मा) अमित बलबुद्धिशाली (सः) हनुमान् जी ने (महात्मानं) परम धैर्यवान् (रामं) रामजी के (अभिगम्य) सम्मुख जाकर (प्रदक्षिणं) प्रदक्षिणा (कृत्वा) करके (न्यवेदयत्) निवेदन किया कि (तत्त्वतः) वस्तुतः मैंने (सीता) जानकी जी का (दृष्टा) दर्शन किया है, 'उन्हें आपकी मुद्रिका दी और आपका सन्देश सुना दिया' ॥ ७८ ॥

ततः सुग्रीवसहितो गत्वा तीरं महोदधेः ।
समुद्रं क्षोभयामास शरैरादित्यसन्निभैः ॥७९॥

अन्वय—तत् , सुग्रीवसहितः, 'रामः', महोदधेः, तीरं, गत्वा, आदित्यसन्निभैः, शरैः, समुद्रं, क्षोभयामास ॥ ७९ ॥

सुशीला टीका—(ततः) हनुमान जी के द्वारा सीताजी का समस्त समाचार सुनने के बाद ऋक्ष-वानर सैन्य जुटाकर (सुग्रीव-सहितः) कपिपति सुग्रीव के साथ ('रामः') रामजी ने, (महो-दधेः) दक्षिण महासागर के (तीरं) तट पर 'मार्ग देने के लिए तीन दिन तक समुद्र से प्रार्थना की', अन्त में (आदित्यसन्निभैः) सूर्य के समान अत्यन्त तेजस्वी (शरैः) बाणों से (समुद्रं) समुद्र को (क्षोभयामास) व्यथित कर दिया ॥ ७९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दर्शयामास चात्मानं समुद्रः सरितां पतिः ।
समुद्रवचनाच्चैव नल सेतुमकारयत् ॥८०॥

अन्वय - सरितां, पतिः, समुद्रः, आत्मानं, दर्शयामास, च, समुद्र-वचनात्, च, एव, 'रामः', नलं, सेतुम्, अकारयत् ॥८०॥

सुशीला टीका—तब (सरितां) असंख्य नदियों के (पतिः) स्वामी (समुद्रः) समुद्र ने (आत्मानं) अपने को (दर्शयामास) प्रकट कर दिया (च) और (समुद्रवचनात्) समुद्र के कहने से (चैव) ही ('रामः') रामजी ने (नलं) नल नामक वानर 'इञ्जिनियर' द्वारा (सेतुं) पुल (अकारयत्) बनवाया ॥ ८० ॥

तेन गत्वा पुरीं लङ्कां हत्वा रावणमाहवे ।
रामः सीतामनुप्राप्य परां व्रीडामुपागमत् ॥८१॥

अन्वय—तेन, लङ्कां, पुरीं गत्वा, आहवे, रावणं, हत्वा, सीताम्, अनुप्राप्य, रामः, परां, व्रीडाम्, उपागमत् ॥८१॥

सुशीला टीका—(तेन) उसी पुल से (लङ्कां) लङ्का (पुरीं) नगरी में (गत्वा) जाकर 'विभीषण-मिलन के पश्चात् (आहवे) युद्ध में (रावणं) 'कुम्भकर्ण, मेघनादादि असंख्य पुत्र-पौत्रादिकों के साथ' रावण को (हत्वा) मारा। अनन्तर (सीतां) जानकी जी के (अनुप्राप्य) मिलने पर (रामः) रामजी को 'रावण के यहाँ वर्षों तक रहने वाली सीताजी के अङ्गीकार कर लेने पर लोकापवाद होगा इस के भय से' (परां) बड़ी (व्रीडां) लज्जा (उपागमत्) आयी ॥ ८१ ॥

तांमुवाच ततो रामः परुषं जनसंसदि ।
अमृष्यमाणा सा सीता विवेश ज्वलनं सती ॥८२॥

अन्वय—ततः रामः, जनसंसदि, तां, परुषम्, उवाच । अमृष्य-माणा, सा, सती, सीता, ज्वलनं, विवेश ॥ ८२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुशीला टीका—(ततः) तदनन्तर (रामः) रामजी (जन-संसदि) भरी सभा में (तां) जानकी जी को (परुषं) 'आचरण के सम्बन्ध में' मर्मभेदी वचन (उवाच) कहने लगे। (अमृष्यमाणा) उन बातों को न सह सकने के कारण (सा) ग्लानि में भरी हुई वह (सती) पतिव्रता (सीता) जानकी जी (ज्वलनं) अग्नि में (विवेश) प्रवेश कर गयीं ॥ ८२ ॥

ततोऽग्निवचनात्सीतां ज्ञात्वा विगतकल्मषाम् ।
कर्मणा तेन महता त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥८३॥
सदेवर्षिगणं तुष्टं राघवस्य महात्मनः ।
बभौ रामः सम्प्रहृष्टः पूजितः सर्वदैवतैः ॥८४॥

अन्वय—ततः, अग्निवचनात्, सीतां, विगतकल्मषां, ज्ञात्वा, महात्मनः, राघवस्य, तेन, महता, कर्मणा, सदेवर्षिगणं, सचराचरं, त्रैलोक्यं, तुष्टम् । सर्वदैवतैः, पूजितः, रामः, सम्प्रहृष्टः, बभौ ॥ ८३-८४ ॥

सुशीला टीका—(ततः) सीताजी की सतीत्व परीक्षा के बाद (अग्निवचनात्) अग्नि देवता के कहने से (सीतां) सीता जी को (विगतकल्मषां) निष्कलङ्क (ज्ञात्वा) मान लिया। (महात्मनः) उच्च आदर्श वाले (राघवस्य) रामजी के (तेन) इस 'रावणवध तथा सीता की अग्निपरीक्षा रूपी' (महता) महान् (कर्मणा) कार्य से (सदेवर्षिगणं) देवताओं और ऋषियों के साथ (सचराचरं) सारा चर और अचर अर्थात् जङ्गम और स्थावर (त्रैलोक्यं) त्रिभुवन (तुष्टम्) सन्तुष्ट हो गया। पश्चात् (सर्वदैवतैः) सकल देववृन्दों से (पूजितः) पूजित, सम्मानित होकर (रामः) राम जी (सम्प्रहृष्टः) बहुत ही हर्षित (बभौ) हुए ॥ ८३-८४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अभिषिच्य च लङ्कायां राक्षसेन्द्रं विभीषणम् ।
कृतकृत्यस्तदा रामो विज्वरः प्रमुमोद ह ॥८५॥

अन्वय—लङ्कायां, राक्षसेन्द्रं, विभीषणं, च, अभिषिच्य, कृतकृत्यः, विज्वरः, रामः, प्रमुमोद, ह ॥ ८५ ॥

सुशीला टीका--वे (लङ्कायां) लङ्कापुरी के राजसिंहासन पर (राक्षसेन्द्रं) राक्षसाधिपति (विभीषणं) विभीषण को (अभिषिच्य) राजतिलक करके (कृतकृत्यः) कृतार्थ हो गये और (विज्वरः) त्रिविध चिन्ताव्याधि से मुक्त हो (रामः) राम जी (प्रमुमोद) बड़े प्रसन्न हुए ॥ ८५ ॥

देवताभ्यो वरं प्राप्य समुत्थाप्य च वानरान् ।
अयोध्यां प्रस्थितो रामः पुष्पकेण सुहृद्वृतः ॥८६॥

अन्वय—देवताभ्यः, वरं, प्राप्य, च, वानरान्, समुत्थाप्य, सुहृद्वृतः, रामः, पुष्पकेण, अयोध्यां, प्रस्थितः ॥ ८६ ॥

सुशीला टीका—(देवताभ्यः) देवताओं से (वरं) वरदान (प्राप्य) पाकर (च) और (वानरान्) रण में मरे हुए वानरों 'भालुओं' को (समुत्थाप्य) पुनर्जीवित कर (सुहृद्वृतः) अपने 'सुग्रीव-विभीषण-हनुमान्-अङ्गद आदि' अन्तरङ्ग मित्रों के साथ (रामः) राम जी ने (पुष्पकेण) पुष्पक नामक वायुयान से (अयोध्यां) अयोध्या की ओर (प्रस्थितः) प्रस्थान किया ॥८६॥

भरद्वाजाश्रमं गत्वारामः सत्यपराक्रमः ।
भरतस्यान्तिके रामो हनूमन्तं व्यसर्जयत् ॥८७॥

अन्वय—भरद्वाजाश्रमं, गत्वा, आरामः, सत्यपराक्रमः, रामः, भरतस्य, अन्तिके, हनूमन्तं, व्यसर्जयत् ॥ ८७ ॥

सुशीला टीका—(भरद्वाजाश्रमं) भरद्वाज मुनि के आश्रम 'प्रयाग' में (गत्वा) पहुँच कर (आरामः) समस्त लोकाभि-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

राम-दाता, लोकप्रिय (सत्यपराक्रमः) सत्यपराक्रमी (रामः) राम जी ने '१४ वर्ष की पूर्ति के दिन' (भरतस्य) भरत जी के (अन्तिके) पास 'नन्दिग्राम में अपने आगमन की सूचना देने के लिए' (हनूमन्तं) हनुमान् जी को (व्यसर्जयत्) भेजा ॥ ८७ ॥

पुनराख्यायिकां जल्पन्सुग्रीवसहितस्तदा ।
पुष्पकं तत्समारुह्य नन्दिग्रामं ययौ तदा ॥८८॥

अन्वय—तदा, सुग्रीवसहितः, आख्यायिकां, जल्पन्, तत्, पुष्पकं, पुनः, समारुह्य, नन्दिग्रामं, ययौ ॥ ८८ ॥

सुशीला टीका—(तदा) तब रामजी (सुग्रीवसहितः) सुग्रीव के साथ (आख्यायिकां) भरतोपाख्यान को (जल्पन्) कहते हुए, भरत का गुणगान करते हुए (तत्) उसी (पुष्पकं) पुष्पक विमान पर (पुनः) फिर (समारुह्य) बैठकर (नन्दिग्रामं) 'भरत जी से मिलने के लिए' नन्दिग्राम की ओर (ययौ) चले ॥ ८८ ॥

नन्दिग्रामे जटां हित्वा भ्रातृभिः सहितोऽनघः ।
रामः सीतामनुप्राप्य राज्यं पुनरवाप्तवान् ॥८९॥

अन्वय—अनघः, रामः, भ्रातृभिः, नन्दिग्रामे, जटां, हित्वा, सीताम्, अनुप्राप्य, पुनः, राज्यम्, अवाप्तवान् ॥ ८९ ॥

सुशीला टीका—(अनघः) 'पिता की प्रतिज्ञा पूरी करने के कारण' निष्पाप (रामः) रामजी ने (भ्रातृभिः) अपने 'लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न' भाइयों के (सहितः) साथ (नन्दिग्रामे) नन्दिग्राम में (जटां) जटा (हित्वा) कटाकर (सीतां) सीता जी के (अनुप्राप्य) पाने के बाद (पुनः) सम्प्रति फिर अयोध्या में

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आकर (राज्यं) अपना राज्य (अवाप्तवान्) प्राप्त कर लिया है ॥ ८९ ॥

प्रहृष्टमुदितो लोकस्तुष्टः पुष्टः सुधार्मिकः ।
निरामयो ह्यरोगश्च दुर्भिक्षभयवर्जितः ॥९०॥

अन्वय—'अधुना, रामराज्ये', लोकः, प्रहृष्टमुदितः, तुष्टः, पुष्टः, सुधार्मिकः, निरामयः, अरोगः, च, दुर्भिक्षभयवर्जितः ॥ ९० ॥

सुशीला टीका—('अधुना रामराज्ये') 'अब राम-राज्य में' (लोकः) जनता (प्रहृष्टमुदितः) 'अभिलषित अध्ययन-अध्यापन, सुरक्षाकार्य, वाणिज्य-व्यापारादि के कारण' अत्यन्त हर्षित और प्रमुदित (तुष्टः) 'सांसारिक और पारमार्थिक लाभ के कारण' सन्तुष्ट (पुष्टः) दरिद्रता रहित (सुधार्मिकः) अत्यन्त धर्मात्मा (निरामयः) मानसिक कष्ट रहित (अरोगः) शारीरिक व्याधि-रहित होगी (च) और (दुर्भिक्षभयवर्जितः) कभी अकाल पड़ने की आशङ्का भी न होगी ॥ ९० ॥

न पुत्रमरणं केचिद् द्रक्ष्यन्ति पुरुषाः क्वचित् ।
नार्यश्चाविधवा नित्यं भविष्यन्ति पतिव्रताः ॥९१॥

अन्वय—केचित्, पुरुषाः, क्वचित्, पुत्रमरणं, न, द्रक्ष्यन्ति, नार्यः, च, अविधवाः, नित्यं, पतिव्रताः, भविष्यन्ति ॥९१॥

सुशीला टीका—'रामराज्य में' (केचित्) कोई (पुरुषाः) व्यक्ति (क्वचित्) कहीं भी (पुत्रमरणं) अपने आगे अपने पुत्रों का मरना (न) नहीं (द्रक्ष्यन्ति) देखेंगे। (च) और (नार्यः) नारियाँ (अविधवाः) अपने पति की मृत्यु नहीं देखेंगी, सौभाग्यवती हो वे (नित्यं) सर्वदा (पतिव्रताः) पति-व्रता, पतिसेवापरायणा (भविष्यन्ति) होंगी ॥ ९१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

न चाग्निजं भयं किञ्चिन्नाप्सु मज्जन्ति जन्तवः।
न वातजं भयं किञ्चिन्नापि ज्वरकृतं तथा ॥९२॥

अन्वय—अग्निजं, किञ्चित्, भयं, न, च, जन्तवः, अप्सु, न, मज्जन्ति, वातजं, तथा, ज्वरकृतं, भयं, किञ्चित्, अपि, न ॥ ९२ ॥

सुशीला टीका—'रामराज्य में' (अग्निजं) आग लगने का (किञ्चित्) कुछ भी (भयं) भय (न) न होगा। अर्थात् कहीं भी अग्निकाण्ड न होगा (च) और (जन्तवः) कोई भी प्राणी (अप्सु) जल में 'नदी, सरोवर आदि में' (न मज्जन्ति) डूब कर न मरेंगे अर्थात् अकाल मृत्यु नहीं होगी। (वातजं) वायु-जन्य रोग 'गठिया, लकवा आदि रोग' (तथा) और (ज्वर-कृतं) 'श्लेष्मादि विभिन्न प्रकार के' ज्वर का (भयं) भय (किञ्चित्) रञ्चमात्र (अपि) भी (न) न होगा ॥ ९२ ॥

न चापि क्षुद्भयं तत्र न तस्करभयं तथा।
नगराणि च राष्ट्राणि धनधान्ययुतानि च ॥९३॥
नित्यं प्रमुदिताः सर्वे यथा कृतयुगे तथा।

अन्वय—तत्र, क्षुद्भयम्, अपि, न, तथा, तस्करभयं, न, नगराणि, च, राष्ट्राणि, धनधान्ययुतानि, सर्वे, यथा, कृतयुगे, तथा, नित्यं, प्रमुदिताः ॥९३–९३½ ॥

सुशीला टीका—(तत्र) रामराज्य में कोई (क्षुद्भयं) भूख के मारे (अपि) भी (न) न मरेंगे (तथा) और (तस्कर-भयं न) चोरी-डकैती का भय न रहेगा; (नगराणि) समस्त नगर (च) और (राष्ट्राणि) सब राष्ट्र (धनधान्ययुतानि) धन-धान्य से भरे पूरे रहेंगे। (सर्वे) सभी जनता (यथा) जिस प्रकार (कृतयुगे) सत्ययुग में रहती थी (तथा) उसी प्रकार 'इस त्रेतायुग में भी' (नित्यं) निरन्तर (प्रमुदिताः) सुख की नींद सोएगी ॥९३–९३½ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अश्वमेधशतैरिष्ट्वा तथा बहुसुवर्णकैः ॥९४॥
गवां कोट्ययुतं दत्त्वा विद्वद्भ्यो विधिपूर्वकम् ।
असंख्येयं धनं दत्त्वा ब्राह्मणेभ्यो महायशाः ॥९५॥
राजवंशाञ्छतगुणान्स्थापयिष्यति राघवः ।
चातुर्वर्ण्यं च लोकेऽस्मिन्स्वे स्वे धर्मे नियोक्ष्यति ॥९६॥

अन्वय—महायशाः, राघवः, बहुसुवर्णकैः, अश्वमेधशतैः, इष्ट्वा, तथा, विधिपूर्वकं, विद्वद्भ्यः, कोट्ययुतं, गवां दत्वा, ब्राह्मणेभ्यः, असंख्येयं, धनं, दत्वा, शतगुणान्, राजवंशान्, स्थापयिष्यति, अस्मिन्, लोके, चातुर्वर्ण्यं, स्वे, स्वे, धर्मे, नियोक्ष्यति ॥ ९४–९६ ॥

सुशीला टीका—(महायशाः) अत्यन्त कीर्तिशाली (राघवः) रामजी (बहुसुवर्णकैः) बहुत सुवर्ण मुद्राओं की दक्षिणा वाले (अश्वमेधशतैः) सैकड़ों बार अश्वमेध (इष्ट्वा) यज्ञ करेंगे (तथा) और (विधिपूर्वकं) विधि-विधान के साथ (विद्वद्भ्यः) प्रत्येक विषय के विशिष्ट विद्वानों को (कोट्ययुतं) दस हजार करोड़ अर्थात् एक खर्व (गवां) गौओं का (दत्वा) दान देंगे (ब्राह्मणेभ्यः) ब्राह्मणों को (असंख्येयं) अगणित (धनं) द्रव्य (दत्वा) देंगे और 'इस भारतवर्ष में जनतन्त्र के अनन्तर' (शतगुणान्) सौ गुने अर्थात् अनेक (राजवंशान्) राजवंशों की (स्थापयिष्यति) स्थापना करेंगे। (अस्मिन्) इस (लोके) संसार में (चातुर्वर्ण्यं) ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रों का (स्वे स्वे) अपने-अपने (धर्मे) धर्म में अर्थात् ब्राह्मणों को अध्ययन-अध्यापन, यजन-याजन, दान-प्रतिग्रह में, क्षत्रियों को प्रजापालन, आततायी, आक्रामकों के रक्षा कार्य में, वैश्यों को कृषि-वाणिज्य-पशुपालन में और शूद्रों को राजकीय सेवा में (नियोक्ष्यति) नियुक्त करेंगे ॥ ९४–९६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दशवर्षसहस्राणि दशवर्षशतानि च ।
रामो राज्यमुपासित्वा ब्रह्मलोकं प्रयास्यति ।।९७।।

अन्वय—दशवर्षसहस्राणि, दशवर्षशतानि, च, राज्यम्, उपासित्वा, रामः, ब्रह्मलोकं, प्रयास्यति ।। ९७ ।।

सुशीला टीका—इस प्रकार (दशवर्षसहस्राणि) दस हजार वर्षों तक (च) और (दशवर्षशतानि) दस सौ = एक हजार अर्थात् कुल ग्यारह हजार वर्षों तक (राज्यं) राज्य (उपासित्वा) करने के बाद (रामः) रामजी (ब्रह्मलोकं) वैकुण्ठधाम को (प्रयास्यति) पधारेंगे ।। ९७ ।।

इदं पवित्रं पापघ्नं पुण्यं वेदैश्च सम्मितम् ।
यः पठेद्रामचरितं सर्वपापैः प्रमुच्यते ।।९८।।

अन्वय—वेदैः, सम्मितं, पवित्रं, पापघ्नं, पुण्यं, इदं, रामचरितं, यः, पठेत्, 'सः' सर्वपापैः, प्रमुच्यते ।।९८।।

सुशीला टीका—(वेदैः) चारों वेदों के (सम्मितं) तुल्य (पवित्रं) पवित्र (पापघ्नं) पाप को नाश करने वाले (पुण्यं) पुण्यदायक (इदं) इस (रामचरितं) रामचरित का (यः) जो व्यक्ति (पठेत्) पाठ करेंगे ('सः') वे (सर्वपापैः) 'कायिक-वाचिक-मानसिक आदि' सब प्रकार के पापों से (प्रमुच्यते) मुक्त हो जायंगे ।। ९८ ।।

एतदाख्यानमायुष्यं पठन् रामायणं नरः ।
सपुत्रपौत्रः सगणः प्रेत्य स्वर्गे महीयते ।।९९।।

अन्वय—आयुष्यम्, एतत्, रामायणम्, आख्यानं, पठन्, नरः, प्रेत्य, सपुत्रपौत्रः, सगणः, स्वर्गे, महीयते ।। ९९ ।।

सुशीला टीका—(आयुष्यं) आयु बढ़ाने वाली (एतत्) इस (रामायणं) रामायण की (आख्यानं) कथा का (पठन्)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पाठ करने वाले (नरः) व्यक्ति (प्रेत्य) मृत्यु के पश्चात् (सपुत्रपौत्रः) अपने पुत्र-पौत्रों के सहित और (सगणः) परिजनों के साथ (स्वर्गे) स्वर्ग में (महीयते) 'देवताओं द्वारा' सम्मान प्राप्त करेंगे ॥ ९९ ॥

पठन् द्विजो वागृषभत्वमीया-
स्यात्क्षत्रियो भूमिपतित्वमीयात् ।
वणिग्जनः पण्यफलत्वमीया-
ज्जनश्च शूद्रोऽपि महत्त्वमीयात् ॥१००॥

अन्वय—'एतत्', द्विजः, पठन्, वागृषभत्वम्, ईयात्, स्यात्, क्षत्रियः, भूमिपतित्वम्, ईयात्, वणिग्, जनः, पण्यफलम्, ईयात्, च, शूद्रः, जनः, अपि, महत्त्वम्, ईयात् ॥ १०० ॥

सुशीला टीका—('एतत्') इस रामायण का यदि (द्विजः) ब्राह्मण (पठन्) पाठ करे तो (वागृषभत्वं) वह व्याख्यान-दाता हो ; (स्यात्) यदि (क्षत्रियः) क्षत्रिय पाठ करे तो वह (भूमिपतित्वं) पृथ्वी का अधिपति हो ; यदि (वणिक्) वैश्य (जनः) लोग पाठ करें तो वे (पण्यफलं) व्यापार में विशेष उन्नति (ईयात्) प्राप्त करें (च) और यदि (शूद्रः) शूद्र (जनः) जनता पाठ करे तो वह (अपि) भी (महत्त्वं) महत्त्व-पूर्ण पदों को (ईयात्) पावेगी ॥ १०० ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये
प्रथमः सर्गः समाप्तः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कथासार

यह मूलरामायण आदिकाव्य वाल्मीकीय रामायण के बालकाण्ड का प्रथम सर्ग है। महर्षि वाल्मीकि के प्रश्न करने पर लोककल्याण की भावना से देवर्षि नारद जी ने मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र जी के उदार चरित्रों का संक्षेप में वर्णन किया है।

महर्षि वाल्मीकि ने प्रश्न किया कि हे नारद जी! मैं यह जानना चाहता हूँ कि इस समय, इस संसार में अन्तरराष्ट्रीय ख्याति का कौन ऐसा व्यक्ति है जिसने सभी क्षेत्रों में, सबके लिए मर्यादा स्थापित कर दी है? ऐसा कौन नरोत्तम है जो गुणवान्, वर्णाश्रमधर्मज्ञ, सत्यवादी, निखिल शास्त्रमर्मज्ञ, परायी निन्दा (आलोचना) से विरत रहने वाला, सदाचारी, मन को अपने अधीन करने वाला, क्रोध पर विजय प्राप्त करने वाला, समस्त प्राणिमात्र का कल्याण करने वाला, उपकार मानने वाला, नियम पर अविचल रहने वाला, वीर्यशाली, सामर्थ्यवान्, कान्तिमान्, लोकोत्तर सौन्दर्यशाली और रणकला-निपुण है?

महर्षि वाल्मीकि का प्रश्न सुनकर देवर्षि नारद जी ने उत्तर दिया कि हे मुनिराज! सुनिए, आपने जिन दुर्लभ, अमानवीय गुणों का वर्णन किया है उन अलौकिक गुणों से युक्त केवल एक ही महामानव इस समय, इस धराधाम पर अवतीर्ण हैं। वे इक्ष्वाकु वंश में उत्पन्न, महाराज दशरथ के ज्येष्ठ राजकुमार और महारानी कौशल्या के आनन्दवर्धन हैं। उनका नाम 'राम' है। वे बुद्धिमान्, वक्ता, ज्ञानी, पवित्र, जितेन्द्रिय, वेद-वेदाङ्ग के ज्ञाता, समस्त शास्त्रों के अर्थ एवं रहस्य के मर्मज्ञ, धर्म का पूर्णरूप से पालन करने वाले, सत्यव्रती, मेधावी, प्रतिभाशाली, धनुर्वेद में निष्णात, जनता की शिक्षा-दीक्षा-स्वास्थ्य-आवास-भोजनादि की निःशुल्क व्यवस्था करने वाले, मन को वश में करने वाले, चित्त को एकाग्र रखने वाले, जनता का

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कल्याण करने वाले, कीर्तिशाली, समस्त जनता के प्रियपात्र, अत्यन्त सज्जन, उदार अन्तःकरण वाले, व्यवहार कुशल, प्राणिमात्र के संरक्षक, परिजन-पुरजन का पालन-पोषण करने वाले, राजनीतिज्ञ, षड्यन्त्रकारियों का दमन करने वाले, प्रजापति ब्रह्मा के समान पालन करने वाले, राजशासन रूपी धर्म के परिपालक, विपुल शक्तिशाली, कान्तिमान्, धैर्यशाली, जितेन्द्रिय, शोभा की खान, विशाल कन्धा वाले, आजानु भुजा वाले, सुडौल गरदन वाले, पुष्ट हनुवाले, विशाल वक्षःस्थल वाले, सुन्दर ललाट वाले, भव्य मस्तक वाले, मनोहर चाल वाले, मध्यम डील डौल वाले, साँवले रङ्गवाले, प्रतापशाली, शोभा की खान, शुभ लक्षणों से युक्त, बड़ी-बड़ी आँख वाले और शत्रुओं के संहारकर्ता हैं। उनसे मिलने में किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं है। उनका दर्शन करने से जी नहीं अघाता, वे गम्भीरता में सागर की भाँति अथाह, धैर्य में हिमालय पर्वत की भाँति अचल, पराक्रम में विष्णु भगवान् की भाँति बलशाली, चन्द्रमा के समान प्रिय दर्शन, क्रोध में प्रलयकालीन संहाराग्नि के तुल्य, क्षमा करने में पृथ्वी की भाँति, दान देने में कुबेर के समान और सत्यपालन में धर्मराज के समान हैं।

ऐसे अलौकिक गुणों से अलंकृत अपने जेठे राजकुमार राम जी को दशरथ जी जब युवराज बनाने लगे तब उनकी रानी कैकेयी ने अपने पुत्र भरत के लिए राज्य और राम जी के वनवास के लिए वरदान माँगा। यह सुनकर सत्यव्रती दशरथ जी ने राम जी को वनवास की स्वीकृति दे दी। तब रामचन्द्र जी सुमित्रातनय लक्ष्मण और अपनी धर्मपत्नी सीता जी के साथ वन में चले गये। राम जी के वनवास का समाचार बिजली की भाँति नगर में फैल गया और समस्त जनता ने बहुत दूर तक उनका अनुसरण किया। गङ्गा नदी के तट पर स्थित शृङ्गवेरपुर में

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निषादराज के यहाँ पहुँच कर राम जी ने सुमन्त्र को लौटा दिया। अनन्तर वे भरद्वाज ऋषि के आश्रम में पहुँचे और उनकी आज्ञा से चित्रकूट पर्वत पर कुटी बना कर रहने लगे। इधर पुत्रशोक से विकल हो कर दशरथ जी स्वर्ग सिधारे। भरत जी जब ननिहाल से आये तो उन्हें सब समाचार विदित हुए। वे राम जी को अयोध्या वापस ले आने के लिए चित्रकूट गये। किन्तु राम जी ने खड़ाऊँ देकर भरत जी को वापस लौटा दिया। भरत जी तापस वेष से नन्दिग्राम में रहने लगे। पश्चात् राम जी ने दण्डक वन को अपना निवास बनाया।

दण्डकारण्य में रहते हुए राम जी ने विराध राक्षस का वध, शरभङ्ग, सुतीक्ष्ण एवं सुदर्शन मुनि का दर्शन किया। उनसे दिव्य धनुष, बाण, तलवार एवं तूणीर प्राप्त किये। वहाँ के तपस्वियों ऋषि-मुनियों ने राक्षसों के लोमहर्षण अत्याचारों की हृदयद्रावक कहानी सुनायी। जिसे सुनकर राम जी ने नारी अपहरण करने वाले तथा तपस्या में उपद्रव करने वाले राक्षसों के मारने की प्रतिज्ञा की। उस समय दुराचारिणी शूर्पणखा पञ्चवटी में बखेड़ा मचा रही थी अतः राम जी ने लक्ष्मण के द्वारा उसकी नाक कटवा ली। इस काण्डसे उत्तेजित होकर खर, दूषण एवं त्रिशिरा ने १४ हजार सेना लेकर, १४ वर्ष के वनवासी राम पर आक्रमण कर दिया। राम जी ने उनका संहार कर डाला। अपनी नासिका-विहीना बहन और भाइयों के मारे जाने का समाचार सुन कर लङ्का का सम्राट् रावण क्रोध के मारे आगबबूला हो उठा और उसने योजना बनायी कि मृग का रूप बना कर मारीच—राम-लक्ष्मण को आकृष्ट कर, पर्णकुटी से दूर गहन वन में ले जावे और इस बीच वह जनकनन्दिनी का अपहरण करे। फलस्वरूप उधर मारीच उन्हें दूर वन में ले गया और इधर रावण ने सीता का

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हरण किया। जटायु ने आपद्ग्रस्ता ललना के उद्धार के लिए रावण से घनघोर संग्राम किया। किन्तु रावण उसे घायल कर भाग गया। राम जी जब आये तो जटायु ने सब वृत्तान्त कह सुनाया और उसके बाद वह मर गया। रामजी ने उसकी दाहक्रिया की। अनन्तर कबन्ध राक्षस से मुठभेड़ हुई और उसे मार कर वे आगे बढ़े। शबरी के आश्रम में पहुँचे और उसने राम जी का आतिथ्य किया।

पम्पा सरोवर के तट पर हनुमान् जी से भेंट हुई। हनुमान् जी के माध्यम से उन्होंने अग्नि को साक्षी करके सुग्रीव से मित्रता की। सुग्रीव ने अश्रुपूर्ण नयनों से बतलाया कि किस प्रकार उसके बड़े भाई ने उसकी प्रियतमा तारा और प्राणप्रिय राज्य को छिनकर भारत में एक बुरा आदर्श उपस्थित किया है। तब राम जी ने एक ही बाण से बालि को मार कर सुग्रीव को राज्यलक्ष्मी एवं गृहलक्ष्मी की प्राप्ति करायी। वानरराज सुग्रीव ने सीता की खोज के लिए हनुमान् जी को लङ्का की ओर भेजा।

हनुमान् जी ने दक्षिण महासागर को पार कर, लङ्का की अशोकवाटिका में ध्यानमग्ना सीता का दर्शन किया। उन्हें रामजी की मुद्रिका देकर, अशोकवाटिका में अक्षयकुमार आदि का वध किया। अनन्तर मेघनाद के ब्रह्मास्त्र में अपने को बँधवा कर वे रावण की दरबार में पहुँचे। पश्चात् लङ्कादहन करके वे इस पार लौटे और राम जी से सब वृत्तान्त कह सुनाया।

अनन्तर वानरों की विशाल सेना लेकर राम जी दक्षिण-महासागर के तट पर पहुँचे और समुद्र के कथनानुसार प्रसिद्ध इञ्जिनियर नलनील द्वारा सेतु बँधवा कर लङ्का में पहुँचे। वहाँ संग्राम में सपरिवार रावण का वध किया। अनन्तर सीता जी की अग्निपरीक्षा हुई और विभीषण को राज्यसिंहासन प्राप्त हुआ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वे अपने भाई, धर्मपत्नी और वानरों की सेना के साथ पुष्पक विमान पर आरूढ होकर अयोध्या की ओर प्रस्थित हुए।

नन्दिग्राम में पहुँच कर भरत जी से मिलाप हुआ और इस प्रकार वियोग की घड़ियाँ समाप्त हुईं। अयोध्या में पहुँचने पर अत्यन्त उल्लासमय वातावरण में उनका राज्याभिषेक हुआ।

उन्होंने जिस शासनपद्धति को जन्म दिया वह विश्व में रामराज्य के नाम से विख्यात हुआ। राजतन्त्र होते हुए भी वह वस्तुतः लोकतन्त्र शासनप्रणाली की आधारशिला थी। उन्होंने प्रजा के कल्याण के लिए विस्तृत योजनाएँ बनायीं। जनता की शिक्षा-दीक्षा, स्वास्थ्य, पालन-पोषण, उद्योगधन्धों पर उन्होंने विशेष ध्यान दिया। उनका सभी योजनाएँ सफल हुईं और इस प्रकार उनके शासनकाल में किसी की अकाल मृत्यु नहीं हुई, न कोई नारी विधवा हुई और न तो पिता के जीवनकाल में उसके युवा पुत्र का निधन हुआ। सभी जनता शिक्षित थी और त्रिविध ताप से मुक्त होकर वर्णाश्रम धर्म का पालन करती थी। रामराज्य में न कभी अग्निकाण्ड हुआ, न जल-प्लावन हुआ। न अकाल पड़ा और न चोरी-डकैती-अपहरण की घटनाएँ हुईं। उन्होंने प्रत्येक क्षेत्र में मर्यादा स्थापित कर विश्व को अनुपम सन्देश दिया।

परीक्षार्थियों को सूचना

अध्ययन के समय इन श्लोकों पर विशेष ध्यान दें—

श्लोकसंख्या—४, ७, ६, १२, १३, १६, १७, २३, २८, २९, ३४, ४३, ४५, ५५, ५७, ५८, ६२, ७१, ७३, ७६, ८५, ८६, ९०, ९३, ९६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कृपया इस ग्रन्थको निम्नांकित तिथि पर या उसके पूर्व लौटा दें। विलम्बसे लौटानेपर ५ पैसे प्रतिदिन दण्ड देना होगा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कृष्णा प्रकाशन

बुलानाला, वाराणसी–१

पुस्तकप्राप्तिस्थानम्—

मास्टर खेलाड़ीलाल ऐण्ड सन्स,

संस्कृत बुकडिपो,

कचौड़ीगली, वाराणसी—१. (फोन : ३०१५)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi